लीला सुधा सिन्धु
पद्य रामायण
: रचयिता :
श्रीमद् स्वामी रामहर्षणदास जी महाराज

॥ श्री सीतारामाभ्याँ नमः ॥

लीला सुधा सिन्धु

(पद्य रामायण)

* रचयिता *

श्रीमद् स्वामी रामहर्षण दासजी महाराज

वसंत पंचमी

(विक्रम सं २०६३)

लीला सुधा सिन्धु (पद्य रामायण)

रचयिता :

श्रीमद् स्वामी रामहर्षण दासजी महाराज

प्रकाशक :

प्रकाशन विभाग

श्री रामहर्षण कुंज,

परिक्रमा मार्ग,

अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

दूरभाष : (०५२७८) २३२३१७

तृतीय आवृत्ति : ११००

वसंत पंचमी

(विक्रम सं २०६३)

मूल्य : रु. १५० मात्र

टाइप सेटिंग एवं डिज़ाइन :

डी टी पी सेन्टर, सरस्वती सदनम कॉम्पलेक्स,

धरमपेठ, नागपुर - ४४० ०१०

दूरभाष : (०७१२) २५६०९८९

श्रीमद् स्वामी रामहर्षण दास जी महाराज

(११६८)

पिय नैना तिहारे कमल वारे।

श्वेत-श्याम अरु अरुण वरण के, भरि मकरन्द सुधा सारे॥

रसिक-मधुप-जीवन जिय जानहु, सुन्दर सुखद गजब कारे।

चंचरीक चित तजि चंचल पन, रमिगो नाहिं टरत टारे॥

चितवनि चारु चोरावन चित की, मोहति मनहिं हृदय हारे।

अति अभिराम मधुर ते मधुरी, सोहति सबहि परम प्यारे॥

तव दृग लखैं जाहि को या कोउ, तव दृग देख जरनि जारे।

हर्ष परम पद पावहिं सिगरे, भोगहिं भोग सुखहिं सारे॥

(११६९)

प्रीतम के लोचन लखि पाई।

भाग्यवती नहिं मोहिं सम अधिका, वरणै को कवि गुण गाई॥

जा कहँ निरखि निरखि भव भूलौं, ऐसे हैं सुठि सुखदाई।

रस के आगर सुख के सागर, रसिकन को रस वर्षाई॥

हर्षण सर्वस मोर पियारे, तिन बिनु मोहिं कछु न सुहाई।

(११७०)

जादू भरे तोरे नैना पियरवा चलत चतुर दिशि।

वशी करत बिन मोल सबहिं कहँ, फूँकि मँत्र मनु मैना॥

अनियारे कारे कजरारे, सैन सिरोही सो पैना।

जालिम बड़े जौहरी जुलमी, जुलुम करत दिन रैना॥

कतल करैं बिनु बल की वामन, बलवानहिं नहिं चैना।
बाँके बड़े जीत नर नारी, बचे न त्रिभुवन ऐना॥
खान पान रँग राग भुलावन, कीन्हे धंधा धैना।
हर्षण बिलग न क्षण भर होवत, तेहि गति को कह बैना॥

(११७१)

पीवत अधर अघाउँ न प्यारी तोरे।
जग को स्वाद सीठ सब लागत, सुधा न समता लाव॥
प्रेमानन्द शान्ति प्रद परमा, सुन्दर सुख को ठाव।
रस को रस जो राम रमावै, कहनी में नहिं आव॥
हर्ष वियोग तनिक नहिं सहऊँ, प्राण सँजीवन पाव।

(११७२)

प्यारी तेरो अधर अमिय रस पी।
अजर-अमर-मैं भयो सत्य सत, क्षुधा-तृषा सब छी॥
शोक मोह-भय भूलि न मोरे, आनँद आनँद धी।
सुठि सौंदर्य महा माधुर्यहु, पायो जीवन जी॥
हर्षण प्रभुता सकल ताहि ते, अहौ मोर तुम ती।

(११७३)

प्यारी तेरे अधरन में अरुझैये।
अनुपमेय लखि लजत बिम्ब फल, सुख सुषमा छवि छैये॥

सुन्दर अरुण अमिय के आगर, मधुर मधुर रस पैये।
हर्षण पियत पिपासा वर्धति, पीतउ नहीं अघैये॥

(११७४)

अधरन की अरुणाई मोरे मन मोहना।
काह कहौं मन वाक परे वह, कैसेहु वरणि न जाई॥
मधुर सुधा की श्रोति अनवरत, स्रवति रहति सुखदाई।
नाथ कृपा कर पियन हेतु मोहिं, दीन्ह स्वतंत्र सुहाई॥
तृषित रहौ पै पीतउ हर्षण, मधु ते मधु मधुराई।

(११७५)

अधर पियन की भूखी प्यारे।
सुख को सुख अमृत को अमृत, जानत रूप रसिक बुधि वारे॥
जिव को जीवन रस को रस सो, मधु ते मधुर मोर हिय हारे।
स्वादति-स्वाद यदपि मैं अहनिशि, ललचति रहति तऊ दृग तारे॥
हर्षण नयनानन्द प्रवर्धक, अरुण अधर तिरहे सुकुमारे।

(११७६)

प्रियतम तव अधरन ललचानी।
सुमिरत ही मुख आवत पानी॥
पिय के अधर अमिय रस बोरे, तहँ मन मीन बसत बनि भोरे।
लाल लवनि में लवहिं लगाई, भूलौं भान कहौं को गाई॥
तिहरी कृपा स्वाद सुख पाऊँ, तेहि रस ते रसमयी दिखाऊँ।
हर्षण धनि धनि तव यह दासी, पीवत प्रेम पगी सुख रासी॥

(११७७)

हेरी री मैंने हरुअ हँसनि सिय तोरी।
मधुरी मधुरी मन की मोहनि, अमल अमिय रस बोरी॥
विधु कर निकर विनिन्दकि उज्वल, दाड़िम दँत अँजोरी।
नयन चहैं निरखन मुख मुसकत, चित्त लियो सो चोरी॥
हर्षण हँसी कि हिय की हारिणि, सर्वस लीन्हेउ मोरी।

(११७८)

मुसकनि में मन मोहि लिया।
सुधा सागरी बिन्दु वरषि के, मन्द मुसुकि चित-चोर लिया॥
तन धन धाम न मोहे मोहि कहँ, सुहृद सखन को साथ किया।
एक पाद त्रय पाद विभूतिहु, मोह सकेउ नहिं काम प्रिया॥
सकृत हँसनि में तेरे प्यारी, हारेव हर्षण हर्षि हिया।

(११७९)

प्रिया हँसनि लखि मेरो मना।
मेरो साथ सबहिं विधि त्यागेव, तेरे संगहिं रहत बना॥
शशि कर सरिस सरस सुखदाई, देखि मिटावत ताप घना।
मधुर मधुर अमृत सर रासत, निकसन तेहि महँ रहत सना॥
हर्षण कबहुँ विमुख नहिं करिये, मनुआ अतिथि तिहार जना।

(११८०)

पिया तोरी मधुरी है मुसुकान।
मन मोहनि हिय हरणि सलोनी, रस की रस जिय जान॥

करति चन्द-कर-निकर विलज्जित, झरति सुधा सुख खान।
लखत दिव्य दाड़िम दंतावलि, हियरा मोर हेरान॥
हर्षण हँसत रहैं पिय हरुये, लोचन लखौं लुभान।

(११८१)

मधुर मधुर मुसुकाते रहैं, मन मोहन हमारे।
बिना हँसनि हियरा नहिं हर्षै, सुख को सिन्धु दृगन नहिं दर्शै,
सुधा बिन्दु वर्षाते रहैं, मोरे नैनों के तारे॥
एक हँसनि हिय लियो हमारो, मैं न रही नहिं मोर अकारो,
प्रेम पियूष पिलाते रहैं, प्रिय प्राणों के प्यारे॥
हर्षण हँसी कि रस की धारा, बोरति ज्ञान विराग अपारा,
जानकी जान जिलाते रहैं, हँसि दशरथ दुलारे॥

(११८२)

पिय तोरी मुसुकनि में है टोना।
जो जो लखे भान सो भूले, बिके सबहिं बिन दाम नृप छौना॥
हेरत हँसनि हँसत तिन हियरो, भव रस भूलि भये हैं मौना।
हरेउ हर्ष सर्वस मम प्रीतम, मधुर मुसुकि के श्याम सलोना॥

(११८३)

मैं वचननि की बलि जाऊँ।
सत्य कहौं तव वाक बिसर्गहिं, सुनि सुनि के न अघाऊँ॥
पिक बयनी प्रियतमा तू मोरी, कैसे तोहिं रिझाऊँ।

चुअत अमिय मुख झरननि ते तव, पियत न तृप्तिहिं पाऊँ॥
सुर तरु सुमन झरैं जनु बोलनि, बिखर सुगन्ध समाऊँ।
मधुरी मधुरी मन की मोहनि, बतिया रस वर्षाऊँ॥
शीतल सुखद हृदय हर्षावनि, कर्ण किलोल को ठाऊँ।
जिय रंजनि दुख भंजनि हर्षण, अहनिशि गुण गण गाऊँ॥

(११८४)

प्रियतम मधुर तिहारे बोल।
षटरस व्यंजन सीठे सबहीं, कहौं सत्य उर खोल॥
श्रवण सुखद-गम्भीर मंजु अति, अनुपम अमृत घोल।
बोलत वचन प्रसून झरत जनु, सुन्दर शुचि अनमोल॥
वाक संग निसृत वर वायू, गमगमाति दिग डोल।
कर्णवन्त जे जग जड़ चेतन, सुनि सुख लहत अलोल॥
सुनत तृप्ति नहिं मोहिं कहँ प्यारे, सुनि सुनि बनहुँ बिचोल।
हर्षण-हृदय हरण रस वर्धन, वचननि मोल न तोल।

(११८५)

प्रिया कपोलनि-कंज कली में तोरे।
मेरे अधर मधुप मेड़रावत, पी मकरन्द विभोरे॥
रस को पियत रसिक नहि थाकै, नव नव सुख में बोरे।
पियत घटत नहिं वर्धत छन छन, तेहि महिमा कह को रे॥
हर्षण पृथक होन नहिं चाहत, अनुभव करि सुख सो रे।

(११८६)

प्यारी तिहारे कपोल कमल रे।
बिकसे अमृत सरहिं सुसोहैं, सुख के शाल अमल रे।।
मम मन भृंग भगत नहिं तहँ ते, रस को कोष प्रबल रे।
हर्षण कहौं काह यश तेहि को, रमि गो राम धवल रे।।

(११८७)

प्यारे कपोल तेरे मेरे मन भावना।
सुख के सिन्धु सुधा ते मीठे, रस के सर छबि छावना।।
कुण्डल मीन किलोल करत जहँ, निरखत नयन जुड़ावना।
पी पी अमृत अधर अंजुली, हमहुँ जन्म फल पावना।।
हर्षण सुख के सार हमारे, रोम रोम पुलकावना।

(११८८)

बन्यो कपोल कहहु पिय काहे को।
मधु रस अरु अमृत रस लैके, सानि मदन रस ताहे को।।
सुख सुषमा श्रृँगार में सोधी, साँचा छबी अथाहे को।
काम को काम स्वपानि ते ढाल्यो, लै लोचन के लाहे को।।
हर्षण मधुर मधुर मोहिं हेतहिं, गण्ड बन्यो मन चाहे को।

(११८९)

प्यारी प्राण अधारी, चोटी सुभग सम्हारी। टेक
अतरन भिजी सुचिक्कन पतरी, केशावलि अति कारी,

पुष्प गुथी चूडामणि सज्जित, छूटि नितम्बनि आ री,
नागिनि सी सोह अपारी ॥१॥
अर्ध चन्द्र सम भाल के ऊपर, केश कला छबि न्यारी,
टेढ़ी टेढ़ी कान लौं दरसति, काह कहौं मुख गारी,
वेदहु नहिं पायो पारी ॥२॥
रहत सुखी लोचन लखि तेहि कहँ, पर्शत मोद महा री,
हर्षण ताहि श्रृँगार के हर्षौं, रोम रोम रस वारी,
सब सुख की है सुख सारी ॥३॥

(११९०)

प्यारे तोरी अलकैं अँतर भरी।
पतरी चिकनी छबि की छावनि, चमकति हृदय हरी॥
अनियारी गभुआरी कारी, छूटि कपोल परी।
श्री मुख पद्म पराग पियन को, जनु अलि अवलि गिरी॥
रसिकन प्राण हरण हुशियारी, जालिम जुलुम अरी।
नयन लोभावनि चित की चोरनि, मन मोहनि हमरी॥
परशि-सम्हार तिनहिं सुख पाऊँ, प्यारी प्राण करी।
हर्षण कहा कहौं बिन देखे, चित नहिं चैन धरी॥

(११९१)

प्यारी तेरे आनन में मन अटक्यो।
कोटि यतन करि निकस न कबहूँ, रहत नित्य तह लटक्यो॥

शारद शशि शत लहैं न समता, लाज पूर्ण नभ भटक्यो।
रती रमोमा मुख की शोभा, तव मुख अंश ते चटक्यो॥
अमृत आसव मधु ते मधुरी, आनँद सिन्धु अघटक्यो।
दृग दोनन पीवत नित सीते, एक स्वतन्त्र बेखटक्यो॥
तऊ तृप्ति नहिं लहौं नेकहूँ, यद्यपि क्षण क्षण गटक्यो।
हर्षण जीवन-जीव संजीवन, पाइ प्रिया सब पटक्यो॥

(११९२)

तव मुख चन्द्र चकोर मैं सीते।
अपलक देखि अघाऊँ न नयनहिं, प्राण प्रिये बनि भोर॥
विरह वेदना विनशि हृदय महँ, भरत राग रस बोर।
शान्ति प्रदायक सुख संवर्धक, अमृत आनन तोर॥
हर्षण हे प्रियतमे कहौं सत, तेहि ते जीवन मोर।

(११९३)

हिय को हरण मंगल करण, अमृत झरण रस बोर हे।
दोष को दमन आनँद अयन, शशि ते सोहन मुख तोर हे॥
रामा रमण मन को मोहन, जीवन-जीवन चित चोर हे।
सुन्दर सदन छबि है छोहन, मदन को मदन पिय मोर हे॥
हर्षण को धन प्राण को प्राणन, नयन को नयन श्री किशोर हे।

(११९४)

पिय के मुखहिं अमी रस जानी।
तेहि की मोरी प्रीति निरन्तर, पियौं मधुर मन मानी।।
कहा कहौं सुन्दरता वाकी, नयनन बीच समानी।
कोटि यतन ते निकसत नाहीं, रोम-रोम अरुझानी।।
कोटि-कोटि कन्दर्प दर्पदल, शत शशि छबिहु लजानी।
प्रेम पयोधि प्रवर्धक प्रेमहिं, आनन देखि बिकानी।।
मुख सरोज मकरन्द पियन को, नयन भृंग ललचानी।
हर्षण करि गुंजार बसत नित, रसिक रीत उर आनी।।

(११९५)

प्यारी के कर कंज लुभायो।
सुन्दर कंकण वलय विभूषित, मुदरी मनहिं मोहायो।।
कोमल-कोमल सुख कर सब विधि, पर्शत प्रेम बढ़ायो।
तेहि स्पर्श छोड़ि नहिं जावत, अनपुम आनँद आयो।।
हर्षण पर्शि प्राण संजीवनी, रहहु हृदय रस छायो।

(११९६)

कर कमल की बलिहारी प्यारे तोरे।
पर्शत विद्युत सो हिय सेहरनि, चमकनि कहर मचा री।।
अंग अनंग अनंग अपरमित, परमा प्रीति प्रसारी।
छबि की खान विभूषण भूषित, प्रणत पाल भय हारी।।
पर्श पाय सुख सुधा में सानहुँ, हर्षण हर्ष अपारी।

(११९७)

प्यारी तेरे चरण कमल सुख कन्दा।
मम मन भृंग पियत निशि वासर, मधुर–मधुर मकरन्दा ।।
अरुण अमल तल रेखन रंजित, ध्यान धरत सानन्दा।
मन मोहन चित चोरन मोरे, हिय के हरण स्वछन्दा ।।
श्रवण सुहावनि नूपुर धुनि सुनि, उमगत उर आनन्दा।
लोचन लखत लोभाने तेहि महँ, अनत न जाहि अमन्दा ।।
जो सुख परशि के पावहुँ प्यारी, कहि न सकैं कवि वृन्दा।
हर्षण सुमिरि जगत के जीवहु, काटत कटु भव फन्दा ।।

(११९८)

प्रीतम मनहिं मोहाये अहो, तुम।
पद पंकज मधुवारे तिहरे, मम मन मधुप जिआये अहो तुम ।।
कहा कहौं तिनकी कोमलता, अनुपमेय चित चाये अहो।
प्रेम विवश उर लावति भय भरि, गड़ै न मम हिय पायें अहो ।।
लालति नित्य स्वपाणि ते तिन कहँ, लखि सुकुमार डेराये अहो।
अंकुश कुलिश वज्र कल्प द्रुम, ऊर्ध्व रेख ध्वज भाये अहो ।।
अरुण वरण सुख सदन सुशोभित, लखत रही अरुझाये अहो।
हर्षण सब कहँ आश्रय दायक, सुमिरि सबै सुख पाये अहो ।।

(११९९)

प्यारी मोहिं प्यारी लगो री, देखत रस जिय जागो री।
तन की तोरे संपति भोरे, मोरे मनहिं मोहाई।

सुख सुषमा श्रृँगार सदन में, बागत गयो हेराई॥
नयनन निरखों हिय मैं हर्षो, कर ते पर्शों प्यारी।
परमानन्द शान्ति सुख सोऊ, बनि के प्रेम पुजारी॥
शीश श्रवण भल, भाल भौंह थल, नयन नुकील तिहारे।
अधर–कपोल–चिबुक–नक–आनन, चोरे चित्त हमारे॥
कंध–कण्ठ–कर–उरहु–उरजभर, उदर नाभि युत माला।
कल कटि–उरु–उरु–देश–जंघ की, शोभा सुख की शाला॥
गुल्फ एड़ि वर चरण सुभग तर, पद तल अरुण निहारी।
बिक्यो मोर मन दाम बिना सत, रीझ गयो रिझवारी॥
वसन विभूषण सब निर्दूषण, नख शिख ते छबि भाई।
हर्षण मन्मथ–मथन को मनमथ, रोम रोम रस छाई॥

(१२००)

तू तो काया धन की धनिया।
अनुपम अकथ अपार सुसंपति, पाय भई महरनिया॥
रती रमोमा शची शारदा, करहिं खवासी पनिया।
छन छन रहौं सम्हारत तेहि कहँ, अस मेरो मन मनिया॥
छोड़ि अनत कहुँ जाय न प्यारी, चेरो है सुख सनिया।
भयो अचंचल चंचल चित्तहु, कनक रासि चिंतनिया॥
लोचन ललकि लखत पै लोभी, तनि संतोष न अनिया।
हर्षण अचल रहै धन तेरो, मंगल मोद को खनिया॥

(१२०१)

हृदय हरण पिय मदन मोहन छबि छाये।
तन विभूति कहि सकत न शेषहु, वेद नेति कहि गाये॥
सुख सुषमा श्रृँगार की मूरति, जेहि ते अगणित जाये।
नख ते शिख लौं सुभग सोहावन, आनँद अम्बुधि काये॥
सुन्दर के तुम सुन्दर कर्ता, राम रसिक बनि आये।
अंग अंग चित चोर मधुर तम, अग जग जीव लोभाये॥
जेहि लखि पुरुष त्यागि पुरुषत्वहिं, नारि बनन ललचाये।
हर्षण सुलभ सत्य सोइ मोहि कहँ, रहहुँ सदा उर लाये॥

(१२०२)

देह विभूति अपार पिया तोरी।
शोभा सिन्धु बिन्दु ते उपजत, कोटि काम छबि वार॥
जहँ ते निकसि जात सो देशहु, सुन्दर लगत सुखार।
चरण चिन्ह कर चिन्ह कतहुँ लखि, मोहहिं नवला नार॥
तन को परशि वायु जहँ जावत, तहहीं लगत पियार।
माधुर्य सुधा वर्षत भुइ ऊपर, मिथिला अवध विहार॥
परिकर वृन्द सबहिं सुख सानत, नेह नदी के धार।
हर्षण अहहिं अनंत सबहिं विधि, मोरे प्राण अधार॥

(१२०३)

प्यारी गुण की गेह हमारी।
क्षमा-दया-कृप करुणा आगरि, रूप रासि उजियारी॥

लज्जा शील–सकोच की सागरि, विनय विवेक अगारी।
मैत्री–मुदिता–शम–दम तोषा, श्रद्धा भक्ति अपारी।।
पतिव्रत धर्म धुरी जग एकी, निर्मम निरहंकारी।
परिकर पालनि सुख संवर्द्धनि, सकल जीव हितकारी।।
अमृत मई मोहिं वश कीन्ही, बनि गयो तोर पुजारी।
हर्षण दिव्य अनन्त गुणन की, मूरति जनक दुलारी।।

(१२०४)

सदगुण के हो खान पिया जू।
तेहि ते सगुण कहावहु प्रीतम, गुणातीत भगवान।।
जन मन रंजन भव भय भंजन, मूरति मोद निधान।
दिव्य अनंत गुणन की गुणता, तुमहीं ते निर्माण।।
तिनहिं कृतार्थ करन के हेतहिं, दीन्हे निज तन थान।
नतरु अपेक्षा कौन गुणन की, स्वयं सिद्ध जिव–जान।।
सदा स्वतन्त्र सच्चिदानन्दा, रहित त्रिपुटिका वान।
हर्षण चरित–चन्द्र लखि चेरी, बनो चकोर लुभान।।

(१२०५)

या विनती रसिकेश चरण में।
प्राण–प्राण प्रियतम पिय मोरे, महिमा महा नरन में।।
अंग मई अलियाँ सब मोरी, आई संग शरण में।
मम समान अनुभव के योगहिं, मन बुधि देह करण में।।

कृपा कोर नित रहै तिनहिं पर, रस हीं रसहिं झरन में।
तव सुख सुखी रहैं सोउ छन छन, प्रेमामूर्ति शरण में।।
गिने परम पुरुषार्थ श्री सेवा, मन न गयो विचरण में।
तेहिते सब विधि तिहरी रघुवर, कीन्हे आप वरण में।।
सब में रमैं सो राम कहावै, हर्षण ढरहिं ढरन में।

(१२०६)

धनि स्वभाव तिहरो है प्यारी।
काम-क्रोध-मद-मत्सर-ईर्षा, लोभ द्वेष के पारी।।
कृपा रूपिणि करुणा करि करि, पालति स्वजन सम्हारी।
परिकर हेतु वारि सब अपनो, स्वार्थ न नेक निहारी।।
रहनि कहनि एक सरिस सुखद तम, देखि गयो बलिहारी।
जेहि विधि सुखी रहहु प्राणेश्वरि, सोइ संयोग विचारी।।
तव रुख पाय प्रेम पथ चलि हैं, याही टेक हमारी।
हर्षण तिहरो सर्वस हमरो, मैं अरु मोरि तिहारी।।

(१२०७)

कृपा कोर लखि लाल लली की।
सुख के सिन्धु समानी सखियाँ, निरखहिं छबि प्रिय-प्रेम पली की।।
पिय प्यारी सुख को सुख मानी, तिन इच्छा निज चाह भली की।
सेवहिं अति अनुराग भरी सब, अष्ट याम रस रीति बली की।।
हर्षण करहिं परस्पर चर्चा, युगल मधुर रस रूप कली की।

(१२०८)

लखहु अनूठी झाँकी री प्यारी।
युगल मधुरिमा अतिहिं अनूठी, शोभा सुखद अनूठी भारी।।
सौकुमार्यता सरस अनूठी, मुसकनि मधुर अनूठी न्यारी।
रहनि अनूठी कहनि अनूठी, चितवनि अहै अनूठि अपारी।।
हर्षण सम्पति सकल शरीरी, देखि अनूठी अलि बलिहारी।

(१२०९)

पिय-प्यारी पियैं रस झरणन के।
रस अरु रसिक परस्पर बनि के, चखैं स्वाद बिन वरणन के।।
तैसहि चन्द्र चकोर बने दोउ, लहैं लाभ नव नयनन के।
दूनहु ह्वै प्रेमी प्रेमास्पद, प्रीति पगे बिनु बयनन के।।
रुख को राखि रमैं इक इक में, अलग गती नहिं सपनन के।
दोउ दृग की जिमि दोउ पुतरियाँ, फिरैं साथ बिन सधनन के।।
छीर नीर उपमा नहिं भावति, भानु प्रभा सम धरणन के।
हर्षण युग युग जीवहिं दम्पति, हम गुलाम दोउ चरणन के।।

(१२१०)

बसि गये नैनन में पिय प्यारी।
आनँदकन्द कमल दल लोचन, कमलानन मधु वारी।।
कमल पाणि अरु कमल चरण दोउ, कमल गंध वपुधारी।
अमल कमल कोमल श्री अंगनि, छहरति छबि हिय हारी।।

लोचन भृंग परागहिं पीवत, गुंजत टरत न टारी।
सो रस जानै परिकर आली, अनुभव करि सुख सारी॥
श्यामल स्वामि स्वामिनी गोरी, घन दामिनि द्युति कारी।
रमत रमावत हर्षण स्वजनन, विहरैं कनक बिहारी॥

(१२११)

मूरति मधुर मोहनिया प्रीतम प्यारी की।
नारिन के नयनोत्सव नव-नव, रस वर्धत छन छनिया॥
श्रवण-सुखद मृदु बोल दुहुँन के, सुमन झरत जनु बणिया।
तिनके तन की गंध घ्राण करि, मनुआ तजत अपनिया॥
युगल किशोर की शीथ प्रसादी, लहि रसना रस सनिया।
सुन्दर सुभग शरीर के पर्शत, आनँद अनुभव अनिया॥
भूलि जात सबहीं विधि आपा, त्रिपुटी विनशि बहुनिया।
हर्षण धन्य सखी हम सिगरी, सेवहिं सरसि सोहनिया॥

(१२१२)

सुनहु सखी दोउ नाम पियारे।
सीता नाम यथा सुख वितरत, राम नाम तस मनहिं विचारे॥
मधुर-मधुर दोउ सुभग सरल अति, सुमिरत रसना में रस आरे।
मंगल करन हरण भव भय के, दुःख दोष द्रुत दौरि निकारे॥
अग्नि सरिस तेजस्वी दूनहु, पाप ताप-तृण छन महँ जारे।
रवि सम तेज चन्द्र सम शीतल, हिय-प्रकाश-अमृत विस्तारे॥
दोउ अपवर्ग फलादि के दानी, प्रियतम प्रेमा भक्ति प्रसारे।
हर्षण नामी-नाम एक सत, सच्चिद् आनँद रूप अपारे॥

(१२१३)

दोउ की चरित चन्द्रिका प्यारी।
पूर्ण-पूर्ण अमृत रस श्रावति, नयन सुखद प्रियकारी॥
श्रवणहु शब्द सुधा के स्वादी, तृप्त न होहिं अहा री।
जड़ चेतन जग जीव नित्य नित, पोषति निज रस झारी॥
नित्य-मुक्त अरु महा मुमुक्षहु, परमा प्रीति पसारी।
सुनत अघात न नेकहु मन महँ, पुनि-पुनि सुनहिं सुखारी॥
कहि सुनि विधि हरि हरहु प्रेम पगि, आनँद लहैं अपारी।
हर्षण अलिन भाग को वरणैं, रहहिं रसी अविकारी॥

(१२१४)

मिथिला अवध स्वधाम, लोक उजियारे।
नयन आँजि मन माँजिके पेखे, मुनिवर मन निष्काम॥
अक्षर अच्युत अरु अव्यक्ता, परम पदहु ज़ेहि नाम।
सच्चिद् आनँद अमल ज्योतिमय, परम तत्व अभिराम॥
गुणातीत पर व्योम विराजित, अमृत रूप अकाम।
नाम धरे दुइ एक अहैं सत, परिनिश्चित श्रुति ठाम॥
अति अनल्प भौमा सुख सरसत, अनुभव कर सिय राम।
विहरहिं जहाँ नित्य पिय प्यारी, सह परिकर अठयाम॥
हर्षण करहिं विविध विधि लीला, असमय ललित ललाम।

(१२१५)

लटक मटक मन अटक, प्रिया-पिय आवनि की।
नील निचोल पीत पट पहिरे, चपला चष चमकावनि की॥
भूषण भव्य भटक तहँ भानहु, भहर-भहर मन भावनि की।
भुजनि परस्पर अंस अर्पि के, गति गज हंस लजावनि की॥
मधुर मुसुकि मन मोहनि डारत, चितवनि चित्त चोरावनि की।
कर-कमलनि दोउ कमल फिरावत, मधुप मोहि मेड़रावन की॥
काम रती मद मर्दन आनन, शशि शत-शत सकुचावन की।
हर्षण छहरति छटा चतुर्दिक, रस ही रस वर्षावन की॥

(१२१६)

सहेलनी जुगुल जबहिं बतरात।
गमगमाति मुख निश्रित वायू, मधुप आय मेड़रात॥
मधुर मुसुकि मन मोह परस्पर, चितवनि चित्त चोरात।
बात करन को भूलि नेह नव, लखत मनोहर गात॥
चूमि चूमि चन्द्रानन चतुरे, सुधा स्वाद सरसात।
उर उर मेलि फन्द भुज दैके, आनँद सिन्धु समात॥
बहुरि पाय सुधि समुझन चाहे, ख्याल न आव सो बात।
हर्षण नवल नागरी नागर, निरखि नयन पुलकात॥

(१२१७)

चहत पिय बाहर जान अरे।
पूँछत सियहिं जाहुँ का प्यारी, कारज कछुक करें॥

तिरछी तकनि ताकि सो बोलीं, इच्छहिं पूर्ण चरें।
चितवनि–मुसुकनि पेख रसिक वर, भूले भान हरे॥
चुम्बन अरु आलिङ्गन करि–करि, रसमय रसहिं झरे।
बिसरि गये क्रीड़ा रत सबहीं, अलिगन मोद भरे॥
प्रीति रीति ललि लाल की वर्णहिं, सुख की ढरनि ढरे।
हर्षण सुखद सिया की चितवनि, प्रीतम राखि धरे॥

(१२१८)

सहजहिं सुन्दर युगल किशोर।
अंजन बिनु तिन अँखिया कारी, चितवनि में चित चोर॥
चिक्कन चिकुर फुलेल बिना सखि, कारे घन घुँघरोर।
पान बिना वर अधर शोणिमा, मोहति मनुआ मोर॥
बिना महावर पदतल लाली, लखतहिं करति विभोर।
गन्ध बिना दिव देह सुगन्धित, सुख वितरत चहुँ ओर॥
बिन भूषण बिनु वसन के शोभित, अनुपम अकथ अथोर।
बिनु धोये निर्मल तन–इन्द्रिय, चमकति वितरि अँजोर॥
हर्षण रस मय राम सिया दोउ, परिकर जन रस बोर।

(१२१९)

पिय प्यारी दोउ पँलगा पर भाये।
दै गलबाँह सुखहिं सरसाये, मन्द मन्द मुसकाये॥
लखत आरसी आनन काये, इक इक रूप लोभाये।

चूमि चूमि तन छाँह मोहाये, रूप रसिक रस पाये॥
देखि देखि दोउ भान भुलाये, बहुरि चेत महँ आये।
गुनि सुन्दरता सीम सुहाये, अपने आप अघाये॥
बिम्ब कबहुँ प्रतिविम्ब समाये, परम प्रीति पुलकाये।
वरणि परस्पर छबि में छाये, हर्षण हिय हर्षाये॥

(१२२०)

राम रसिक पिय, सिया मधुर मधु मोरे।
निरखि निरखि प्रतिबिम्ब दर्श महँ, भ्रम बस भये विभोरे॥
कहत प्रिया ते प्रीतम आतुर, देखु सिया इन को रे।
अन्य प्रिया-प्रीतम ये कहँ ते, आये रति-रस बोरे॥
हम ते तुम ते अधिक सुहावन, सुन्दर श्यामल गोरे।
हाय हमैं परिकर सब तजिहैं, लखि रस अधिक अहो रे॥
नवल पिया प्यारी में पगि हैं, सब विधि तिनके हो रे।
पै लखि इनहिं प्रीति अति लागति, ईर्षा द्वेष न थोरे॥
हर्षण सियहु सोइ भ्रम भ्रमि के, बस विषाद सुख छोरे।

(१२२१)

सुनो पिय प्यारी दोउ दर्पण निहारी तुम,
भान को बिसारी, परिछाहीं के लोनाई में।
भयो भ्रम भारी, ताहि अन्य नर नारी,
मानि के दुखारी, सिय स्वामी हो भुलाई में॥

दर्श द्रुत टारी, सखी बैनहिं उचारी,
लखो हृदय हारी, कहँ कोऊ है दिखाई में।
सुखी सुख सारी, एक अपुहिं को विचारी,
सर्वस अलि वारी, हर्षण प्रभु के स्वाभाई में॥

(१२२२)

प्यारी प्रीतम-प्रेम दिवानी।
तैसहिं प्रीतम प्रेम विवश ह्वै, बिके प्रिया के पानी॥
युगल नेह नित नव नव वर्धत, नेति नेति श्रुति बानी।
मन वाणी बुधि पार अगम अति, अतिशय कठिन कहानी॥
कर्मठ-ज्ञानी अरु बड़ योगी, मुक्तिहिं रहे लुभानी।
राम कृपा लहि सिय प्रणतन में, कोउ कोउ विरला जानी॥
तोहि ते कहहुँ सत्य सत आली, दुइ ह्वै एक प्रमानी।
चन्द्र कला की कही श्रवण करि, हर्षण सखि हर्षानी॥

(१२२३)

देखो जी देखो दर्श छाँह निज कायो।
पुनि प्यारी प्रतिबिम्ब लखहु पिय, रघुनन्दन रस छायो॥
दूनहु बीच अधिक सुन्दरता, विद्युत की घन पायो।
श्याम स्वरूप तिहारो प्रीतम, गौर वर्ण सिय भायो॥
कज्जल-कनक मूर्ति जो अन्तर, सोइ यहाँ दरशायो।
तुमहिं करौ निर्वार याहि को, नृप सिर मौर कहायो॥

रूप गुमान करहु जनि प्यारे, प्यारी रूप सवायो।
ताते रहहु सदा तेहिं सेवत, लोचन लखत लोभायो।।
हर्षण सकुचि मुसुकि नव नागर, अलियन चित्त चोरायो।

(१२२४)

सखी री कारेन की गति न्यारी।
कारे घन वर्षत बड़ि बुन्दन, जग सब करत सुखारी।।
कारी रात शान्ति सुख दायक, रसहिं विवर्धन वारी।
कोयल कारी कुहू कुहू करि, चित कर्षति नर नारी।।
कारी धेनु-क्षीर अति मीठो, नाशक देह विकारी।
कारे मधुप पियत मकरन्दहिं, संज्ञा रसिक की पारी।।
कारी कारी अँखियाँ नीकी, सुधा श्रवावन वारी।
कारो अंजन अँखियन आँजी, सोह श्वेत रतनारी।।
चन्द्र श्यामता सुखद सबहिं कहँ, नेत्र पियार अपारी।
कारे कारे केश शीश की, शोभा सुखद सँभारी।।
श्रुति के अक्षर श्याम सुहावन, देत परम पद भारी।
हर्षण गगन नीलिमा निज में, जगत बसावन हारी।।
सुनत सखी मन मुसुकि के बोली, बड़े चतुर धनु धारी।

(१२२५)

सुनियो री सखि तोहिं सुनाऊँ।
श्याम रंग को तन जो मेरो, सोइ श्रृँगार कहाऊ।।

जेहि रस बिना सखिन सुख नाहीं, तनिक न होय अघाऊँ।
यद्यपि कारो काय तदपि मम, आत्मा गोर स्वभाउ॥
जनक नन्दिनी आत्मा मोरी, सत-सत सबहिं बताऊँ।
रूप शील गुण खानि अनूपम, कनक वर्ण छबि छाऊ॥
रस की रस रस वर्धनि प्यारी, जीवन जीवनि गाऊँ।
काह कहै मोहिं कारो कारो, कारो भेद न पाऊँ॥
हर्षण नेति कहैं जेहिं श्रुतियाँ, तुम तेहिं खसम खिझाऊ।

(१२२६)

सदा सोहागिन सोइ तिया सत, कारो जासु भतारा।
सधवा विधवा होति छनहिं छन, तेहिं बिनु त्रिभुवन दारा॥
अपनेहिं ते सब रमैं मोहिं में, लखत मोर तन कारा।
तेहिं ते राम नाम गुरु दीन्हे, योगि वृन्द सुख सारा॥
जिय बिन देह नदी बिनु जल के, मनुज बिना घर द्वारा।
कारे बिना तथा जड़ चेतन, यावत जगत अपारा॥
नहिं मानहु तो पूँछ प्रिया ते, लेवहु निज हिय धारा।
कारो कहत मोहि सुख उपजै, गोरिन नयन निहारा॥
हर्षण गंग जमुन सी सोहै, श्याम गौर की धारा।

(१२२७)

पिय प्यारी मन की पहिचाने।
खिझवति देख पियहिं निज अलियन, सकुचि सिया दुख माने॥

तनिक पराभव पिय को दुःसह, हँसिहु माहिं जिय जानै।
तेहि ते उतर दिये रघुनन्दन, नतरु रहत मुसुकाने॥
प्रीतम-प्यारी नित्य एक होइ, इत दुइ रहे दिखाने।
युगल प्रेम सुनि प्रीतम मुखते, सब सखि आनँद आने॥
हँसि के कही चतुर हो लालन, तर्क शास्त्र अति छाने।
हर्षण कोइला-कनक की समता, कोउ नहिं जगत बखाने॥

(१२२८)

काम को काम, पिया मोहिं भायो।
सुख सुषुमा श्रृँगार के सिन्धू, शत शत शशि जित आनन पायो॥
मधुर मधुर मन मोहन मोरे, छबि की खानि जगत में जायो।
चरण कमल की भ्रमरी सखियाँ, पियत पराग न नेक अघायो॥
चेरी करि राखहिं जिन शरणहिं, तोहिं ते सबन्ह सोहाग सोहायो।
रस वर्धन के काज कहहिं जो, धर्‌यो न ध्यान त्रुटिहिं बिसरायो॥
सोइ सेवा में निरत अहर्निशि, जेहिं ते युगल रहहिं रस छायो।
मुख प्रसन्न पिय प्यारिहिं लखि के, सुखी रहहिं हम मन बच कायो॥
हर्षण अलिन विनय सुनि प्रीतम, अरसि परसि सुख दै समुझायो।

(१२२९)

तुम सम प्रीति न पायो कतहूँ।
निजी नेह मोहिं आपन कीन्ही, अलि बस में रह हमहूँ॥
मोहिं लगि त्यागि दई भव-रस कहँ, लखि लखि मो कहँ जियहू।

सबहिं भाँति सिगरी तुम मोरी, ललकि लखौं लव लवहूँ ।।
प्यारी सरिस करहुँ अलि अनुभव, किंकरि करि नहिं गिनहूँ।
सबहिं अहौ आत्महु ते अधिकी, शशि सम प्रिय छन छन हूँ।।
गारि तिहारी मोहि मधु मीठी, सुनत श्रवण सुख सुनहूँ।
हर्षणं हम तिहरे तुम हमरी, सत्य वचन मम मनहू।।

(१२३०)

प्रभु मेरे प्रीतम प्राण अधारे।
सिया स्वामिनी सर्वस हमरी, तिन बिन शून्य अगारे।।
युगल प्रीति अति पावनि पावहिं, बिनती सुनहिं पियारे।
रावरि कृपा भाव भल आनी, निज सुख सदा बिसारे।।
प्रेम पगी रस रसी सुसेवहिं, प्रिय पद कमल तिहारे।
निरखत लीला लली लाल की, ललचत लोचन तारे।।
हिय हर्षण पिय-प्यारी परिकर, हिय के भाव उचारे।
लखि स्वभाव दोउ को सब सखियाँ, वर्णहि यश हिय हारे।।

(१२३१)

प्रीतम तू तो प्राण को प्यारो।
देखि देखि तोहिं जीवहिं अलियाँ, जीवन जीव हमारो।।
तिहरे सुख ते सुखी अहर्निशि, तू सुख को सुख सारो।
सिया रमण रस झरण पिया तू, सखियन को हिय हारो।।
चितवनि चित के चोर सबहिं के, मदन मोहन छबि वारो।

मुसुकनि मधुर मधुरि मन मोहति, बोलनि अमिय रस झारो॥
जन मन रंजन भव-भय भंजन, रसिक राय रस वारो।
हर्षण तव कहाय सब पाई, आनँद लह्यो अपारो॥

(१२३२)

मोरी आली राघव सों मन मान्यो।
मुसुकनि देखि रहति हौं मुसुकी, चित्तहु तेहिं अरुझान्यो॥
मेरे नैन सरोज नयन में, लगे रहत जिय जान्यो।
निज सुख सुखी रसिक मोहिं मानी, मो ते प्रेम को ठान्यो॥
रति रस क्रिया कलाप को करि के, मिलि विविक्त सुख सान्यो।
वर्धत रहत रसहिं निशिवासर, हौंहु सुखी हिय आन्यो॥
सो सब कृपा किशोरी जू की, भली भाँति पहिचान्यो।
हर्षण नतरु राम रसिकेश्वर, निरसहिं कत लपटान्यो॥

(१२३३)

जब ते राम शरण हौं आई।
सीय कृपा करि संग में सजनी, मिथिला ते इत लाई॥
तब से कहा कहौं मैं हिय की, आनँद सिन्धु समाई।
प्रीतम के प्रिय प्यारहिं लहि के, नैहर नेह भुलाई॥
दरश परश कैंकर्य करति नित, फल को फल गिन भाई।
स्वामिनि सार सँभार करहिं सब, निज सम साज सजाई॥
पिय प्यारी दोउ जीवन हमरे, तिन बिनु कछु न सोहाई।
हर्षण युगल किशोर बिना जो, चाहौं सो जरि जाई॥

(१२३४)

जीवन सर्वस प्यारी प्यारो।
राम वल्लभा सीता बल्लभ, प्राणन प्राण हमारो॥
चक्रवर्ति दशरथ नृप नन्दन, त्रिभुवन में उजियारो।
विधि हरि हर सुर नर मुनि सेवत, चरण कमल सुख सारो॥
सर्वेश्वर सब को सुख दायक, आनँद सिन्धु अपारो।
सुन्दर सदन मदन मद मर्दन, करत मनहिं मतवारो॥
तिन बिन मो कहँ मोक्ष न भावै, भव रस कहा गँवारो।
हर्षण महल-टहल मन भावति, युगल किशोर निहारो॥

(१२३५)

जो सुख भयो पिया के पाये।
सो सुख ब्रह्मा नन्द में नाहीं, नहिं कैवल पद पाये॥
सो सुख पिया परश में पावहुँ, सो नहिं अमृत पाये।
जो आनँद नयनन भरि निरखी, घन लखि मोर न पाये॥
हृदय लाइ कामिनि को कामिहु, सो सुख कला न पाये।
मधुर-मधुर मृदु बोल श्रवण सुनि, जो सुख जियरा पाये॥
सो सुख सामवेद सुनि सस्वर, कबहुँ न स्वपनेहु पाये।
हर्षण पिय प्यारी लखि संगहि, सर्वस-सर्वस पाये॥

(१२३६)

प्राण-प्राण रसिकेश्वर मोर।
आत्म-आत्म श्री जनक नन्दिनी, सेवहुँ उठि नित भोर॥

आनँद अम्बुधि गोता लेवहुँ, लखि-लखि युगल किशोर।
तिन ते विलग मनहु नहिं जावत, स्वप्नेहु मोर न और॥
महली बनि टहलहिं को पाई, जो परमार्थ अथोर।
केवल कृपा पिया प्यारी की, नहिं कछु साधन जोर॥
तेहि पै दोउ के प्यार को लहि के, रस ही रस में बोर।
हर्षण मगन मोक्ष सुख बिसरेउ, निरखि-निरखि कृप कोर॥

(१२३७)

नयनो में चित चोर बस्यो री।
सर्वस लूट हमारो आली, दृग-पथ उरहिं धँस्यो री॥
हमहिं निकारि भवन ते बाहर, अह मम सबहिं नस्यो री।
रोम-रोम में रमत निरन्तर, रसमय रहत रस्यो री॥
एक स्वतन्त्र रसिक रघुनन्दन, गो-रस चखत लस्यो री।
ताहू पै मोहिं आनँद आवै, अचरज अतिहिं कस्यो री॥
तेहि सुख सुखी रहहुँ तजि स्वत्वहिं, गयो गुमान गस्यो री।
हर्षण दासी बनि नित सेवौं, वाके प्रेम फँस्यो री॥

(१२३८)

सुनु सखि दिल ले लियो दिलदार हमारा।
जात चलो गैल-गैल, देखि अटा अवध छैल,
कजर कोर दृगन बड़े, मार्‍यो मोहिं नजारा॥
मुरुकि-मुरुकि मुसुकि-मुसुकि, अतिहिं ढीठ ठुठुकि-ठुठुकि,
कीन्ह विवश भलि भाँति, चितवनि जादुहिं डारा॥

राग रंग सबहिं भूल, श्याम मूर्ति नयन झूल,
जगत सबै श्याम दिखै, मदन मोहन रस वारा॥
लोक लाज दूरि भाग, बढ़ेउ हृदय राम राग,
कोउ कहै कछुक हर्ष, हृदय हरण हिय हारा॥

(१२३९)

लगन लगी तब कौन करै डर।
कहै सोइ जा कहँ जोइ भावै, हँसै हमहिं भल भाव न उर भर॥
करि कुतर्क मस्तिष्क बिगारै, करत नित्य अपमान जियहिं जर।
शंक शोक नहिं नेक मोहिं सखि, दियो ओखलिहिं शीश अभय वर॥
काह करै मिलि जग के सिगरे, रक्षक रघुवर राम धनुष धर।
प्रेम करी अब अवध छैल सो, रसिक राय रस रूप रसहिं झर॥
मुनि मन मोहन सुखद साँवरो, जेहि लखि चाहत नारि बनन नर।
तिय ह्वै मोहि गई का अचरज, हर्षण भव रस भूलि भजी पर॥

(१२४०)

श्यामा श्याम सलोनी सलोना।
सीता राम रमत जो सब में, शिव मन मानस हंस के छौना॥
ज्ञानिन-ज्ञेय योगि के धेया, भक्तन के भगवान आयोना।
सोइ हमरे ठाकुर ठकुराइन, तिन तजि और न जानहु कौना॥
नीच टहल करि-करि महलन की, रहिहौं सुखी जगत रस खोना।
झारि पातरी जूठन जेंबो, रहिहौं पुष्ट सेव हित भौना॥

निरखि-निरखि प्रिय प्रियतम प्यारी, रहिहौं रसहिं दृगन के दोना।
हर्षण त्रिभुवन नारि सिहैहैं, रमा उमा अस भाग न होना॥

(१२४१)

सखी लखि लाल की अलकान।
को नहिं मोहि गयो जड़ चेतन, जेते जीव जहान॥
जब लगि नहिं निरखै सियवर की, मन्द-मन्द मुसुकान।
तब लगि भले करैं सब सब कछु, धार समाधी ध्यान॥
योग यज्ञ व्रत संयम साधन, विरति विवेक महान।
सुन्दर श्याम मदन मन मोहन, नेत्र सुखद रस खान॥
पुंसा मोहन रूप रसिक वर, आनँद कन्द सुजान।
लखतहिं आत्मा राम विमोहैं, वारि विलोचन आन॥
सुन्दरता प्रिय नारि कथा को, हर्षण कौन बखान।

(१२४२)

घोड़वा चढ़े पिय नीको लगत।
अटा चढ़ी सिय कहति सखियन सो, प्यारो-प्यारो मन को ठगत॥
क्रीट मुकुट सिर फहरत अलकैं, कारी-कारी कंठे लगत।
कानन कुण्डल हलकि कपोलहिं, मनहुँ सुधा सर मीन बगत॥
कर कमलनि हय रासहिं पकरे, राम रुखहिं कस हयहु भगत।
शोभा सदन श्याम सुखदायक, वितरि तेज जग जगै जगत॥
अनुज सखा सब सँग-सँग सोहत, लखि-लखि पुर के लोग पगत।
हर्षण हृदय हारिणी छबि को, राखहुँ आँखिन माहिं लगत॥

(१२४३)

प्यारी तेरे भाग को अन्त न पाय।
जो स्वरूप विधि हरि हर दुर्लभ, सो तिहरो पति आय।।
योगिवर्य जेहिं चित्त रमावन, साधन साध बनाय।
शुक सनाकादि कपिल मुनि नारद, देखन हित ललचाय।।
सो सच्चिदानन्द रघुनन्दन, तुमहिं हृदय लपटाय।
जेहिं के चरण निकसि सुर सरिता, त्रिभुवन पूत बनाय।।
रस बस सो प्यारी-पद चुम्बत, अपने अंक बिठाय।
हर्षण स्वामिनि-सुख एकान्ति, तिहरो अचल स्वभाय।।

(१२४४)

सखियन भाग कहै को पारै।
रावरि-कृपा पाइ सिय स्वामिनि, सदा सुखहिं सुख सारैं।।
प्रीतम अरु प्यारी को अनुभव, करत रसहिं रस झारैं।
पिय तो केवल प्रिया अनुभवहिं, आपु पियहि एक धारैं।।
युगला नन्द सुलभ अलियन को, ललि जू हृदय विचारैं।
युगल नाम अरु लीलहिं रमि के, युगल स्वरूप निहारैं।।
युगल संग बसि युगल धाम में, सेवत स्वसुख बिसारैं।
युगल किशोर अनन्य उपासी, युगलहिं पै सब वारैं।।
हर्षण हम समान नहिं कतहूँ, सुर नर नाग मझारैं।

(१२४५)

युगल किशोर किशोरि अलिन के सर्वस।
नित्य निकुञ्ज विहारी विहारिणि, सेवहिं सब छल छोर॥
सदा युगल के चरण कमल की, भ्रमरी बनी विभोर।
युगल पाणि पंकज ते पावहिं, प्यार पर्श रस बोर॥
अभयी बनी मुखहिं लखि मानहिं, भाग अनन्य अथोर।
अष्टयाम कैंकर्य निपुन सब, जाग्रत–शयन के ठौर॥
झाँकी युगल झाँकि सुख सानहिं, जिमि लखि चन्द चकोर।
हर्षण तिनकी भाग कहै को, जिनके बस चित चोर॥

(१२४६)

बसो दोउ अँखियन में ललि लाल।
हृदय–रमण रस झरण रसिकवर, रसिकन हेतु रसाल॥
उर की कुञ्ज कलित कमनीया, सुख प्रद विशद विशाल।
प्रेम पगे विहरहु पिय प्यारी, अष्ट–याम सुख शाल॥
ललित ललित लीला तहँ करि करि, सखियन करहु निहाल।
गिरत पलक भीतर अवलोकहिं, बाहर उघरत काल॥
तुम बिन रहहिं छणार्ध न कबहुँ, जल बिनु मीन बिहाल।
हर्षण मैं तैं मोर रहै नहिं, रहहिं नृपति वर बाल॥

(१२४७)

नहिं कछु मोर न मैं ही रही री।
वास्तव में आपुहि पिय प्यारी, मैं की जगह सही री॥

उर बिच करहु करावहु चेष्टा, रुचि अनुकूल चही री।
पियन-पियावन वारे आपहिं, रस की सरित बही री॥
जिमि अर्भक प्रतिबिम्ब निरखि के, करत किलोल मही री।
आत्मा रमण तथा दोउ नित्यहिं, रामा गण रमही री॥
सीय राम मय सिगरो सत सत, अन्यत् नेक नहीं री।
हर्षण नेत्र लुभाने रूपहिं, भेदी भक्ति गही री।

(१२४८)

सिय स्वामिनि के सैंया को राज।
भीतर-बाहर-उर्ध्व-अधः में, सोई रहेव बिराज॥
दिशि विदिशा रमि रहेउ चतुर्दिक, करत करावत काज।
देहेन्द्रिय-मन-बुद्धि-आत्म में, रहत रसिक सिरताज॥
जेहि के अंड अनंत अनन्ता, रोम रोम में भ्राज।
सोइ अणु अणु अरु रोम रोम में, रमत राम रस राज॥
सोइ सबके ठाकुर ठकुराइन, सोइ जगत जहाज।
हर्षण सोइ सिय रघुनन्दन, सखियन के सुख साज॥

(१२४९)

परम निधि श्री सिय राम हमार।
नेह-नगर की बसने वारी, प्रेम मोल लिय सार॥
भव-रस त्यागी जाहि अपनाई, अप मम बिना विकार।
रहिहौं निशिदिन हृदय लगाये, करि के गल को हार॥

जोगवत रहहुँ ताहि को छन छन, यथा रंक धनधार।
प्रेम पगी ताको तिमि प्यारहुँ, जिमि कामी नव नार॥
तनिक विरह नहिं सहौं सही मैं, जल बिन मीन विचार।
हर्ष अलिन की भाव भावना, सुनत दोउ सरकार॥

(१२५०)

हम रसिकिनि सिय राम रसहिं की।
आत्म भवन में आत्म रमण की, रसमय झाँकी प्रेम फँसहि की॥
झरति रहति झर झर रस धारा, मन बुधि वाक परे सु यशहिं की।
अनुभव करहिं स्वाद-सुख ताको, सच्चिद आनँद सिन्धु धसहिं की॥
दरश-परश करि बाहर भीतर, पियत प्रमोदि अमी बिलसहिं की।
भव रस भोगी जान न वाको, करत करोरन यत्न नशहिं की॥
जब लौं द्रवैं न जानकि-जिउ-पै, तब लग वहि को स्वप्न असहिं की।
हर्षण युगल किशोर कृपा ते, अलियन सोइ सुलभ स्ववशहिं की॥

(१२५१)

युग युग जीवैं युगल वर जोरी।
रसमय प्यारी रसमय प्रीतम, आनँद कन्द किशोर किशोरी॥
परिकर-प्रेम प्रबल हिय जिनके, सर्वस देय अघात न ओरी।
अलियन लै रासहिं रस रासे, बने सदा रसमय चित चोरी॥
मिथिला अवध विहार करैं दोउ, कंचन विपिन प्रमोद की खोरी।
रसहिं श्रवण कर रसहिं लखैं रसि, पर्शे रसहिं चखहिं रस बोरी॥

नासा रसहिं घ्राण करि हर्षित, पगे परस्पर प्रेम अथोरी।
हर्षण मंगल मंगल देखत, जन कहँ लखै सदा कृप कोरी॥

(१२५२)

पिया-प्रिया रस राते रहैं, लली लालन दुलारे।
नागरि नागर नवल नवेली, मधुर कुञ्ज में मधुरी केली,
करि करि रस वर्षाते रहैं, सिय साजन हमारे॥
चितवनि मुसकनि मोहनि डारी, पगे परस्पर प्रीतम प्यारी,
अधरामृतहिं पिलाते रहैं, एक एकन अधारे॥
श्याम गौर हिय हरण सबहिं के, शोभा धाम पार को कहि के,
छहर छहर छबि छाते रहैं, त्रिभुवन उजियारे॥
हर्षण आनँद सिन्धु समाई, परिकर के मन मीन मोहाई,
सेवा निजी कराते रहैं, अलि प्राणों के प्यारे॥

(१२५३)

रहहिं सुखी दोऊ सरकार।
आनँद कन्द अनन्द के अम्बुधि, आनँद चखैं अपार॥
विलग न होहि कबहुँ दोउ रसिया, जी इक एक निहार।
अरस परस पिय प्यारि परस्पर, रति रस रमैं उदार॥
केलि कला में निपुण युलग वर, क्रीड़त कल्प न हार।
अमृत रस वर्षाय अलिन बिच, करत रहैं प्रिय प्यार॥
भोक्ता बने भोग गुनि परिकर, करते रहैं सम्हार।
हर्षण राम सिया सुख सुख को, हमहुँ गुनै सुख सार॥

(१२५४)

ऐसेइ निरखत नयना रहैं।
पिय प्यारी अनुरक्त परस्पर, मधुर मधुर बतराये रहैं।।
दै भुज फन्द उरहिं उर लाये, अखियन आँख मिलाये रहैं।
कलित कपोल मिले दोउ केरे, अलक अलक अरुझाये रहैं।।
अरस परस आलिंगन चुम्बन, करत तृप्ति बिनु पाये रहैं।
चितवनि मुसकनि में इक इक को, चित्त चोरि रस छाये रहैं।।
रति रसज्ञ दोउ केलि कला विद, रस की धार बहाये रहैं।
अष्टयाम अलि वृन्दन सेवित, मदनहिं मदन जगाये रहैं।।
हर्षण आनँद रूप युगलवर, आनँद सिन्धु समाये रहैं।

(१२५५)

बसै मोरे नयनन में यह जोरी।
ऐसेइ प्रीतम प्रिया परस्पर, बनि के चन्द्र चकोरी।।
मुसुकि मुसुकि मधुरे मन मोहत, चितवनि में चित चोरी।
अरुझि रहे भुज फन्द दिये दोउ, सुरझ न कल्प करोरी।।
अधर अमिय पीवत निशिवासर, तृप्ति लहैं नहिं थोरी।
अरश परश आलिंगन चुम्बन, करि करि होत विभोरी।।
रसिक राय रसिकिनि रस राते, सतत रहैं रस बोरी।
रस स्वरूप रस प्रद रस भोगी, रस वर्षत सब ओरी।।
आनँद अम्बुधि नित अवगाहैं, नित्य किशोर किशोरी।
हर्षण युग युग जियैं युगल वर, चहत इहै मति मोरी।।

*****

(१२५६)

नहिं अवध सम अन्य कोउ धाम।
सीता सीता-रमण विहर जहँ, चिन्मय ब्रह्म ललाम॥
ललित ललित लीला नित करि करि, देत सबहिं विश्राम।
रूपोदार्य गुणन ते अपने, चोरत चित श्रीराम॥
सुर-नर-मुनियन से मन मोहत, चितय मुसुकि अभिराम।
नृपति कुअँर के प्रेम पाँस बँधि, त्रिभुवन बिक्यो बेदाम॥
पुर वासिन की कथा कहै को, निरखत प्रभु अठयाम।
जेहि विधि सुखी रहहिं सब हर्षण, हरिहुँ करहिं सब काम॥

(१२५७)

नृपति लाड़िले सों सब प्रीति लगाई।
पुर-जन परिजन सचिव-सन्त-गुरु, जन पदके जे लोग लोगाई॥
सिगरे सद्गुण गेह श्री रामहिं, निरखि-निरखि दृग रहैं लोभाई।
जहँ तहँ चर्चा करहिं नारि नर, अहनिशि प्रभु की करत बड़ाई॥
चहत सबहिं बैठहिं सिंहासन, राम सिया सब के सुखदाई।
आप अछत नृप-पद कहँ देवहिं, दशरथ गुरु ते सुदिन सोधाई॥
समय पाय अभिलाष स्व मन की, जब तब नृपहिं जनावहिं जाई।
नृपतिहु चहत हृदय अस हर्षण, तदपि न काहुहिं प्रथम जनाई॥

(१२५८)

बोले बीच सभा नर ईश।
सुनहु सन्त गुरु विप्र सचिव गण, अरु आश्रित अवनीश॥

पुरजन परिजन जनपद वासी, सबै बुद्धि बागीश।
राम-राज सुख चाखन सिगरे, आतुर दृग हम दीष॥
मोहिं महँ अवगुण कहा कहहु सब, तजन चहहु करि रीस।
जनि संकोच करहिं निज मन में, त्यागहि भय की भीष॥
सत्य सत्य सब हियकी वरणैं, सुनहुँ झुकाये शीश।
हर्षण नृप के वचन श्रवण करि, नाद्यो सभा नदीश॥

(१२५९)

सभा सकल तेहिं काल कही री।
भूपति सुनैं दोष निज कानन,
कहैं सकुच तजि बात सही री॥
अपौरुषेय गुण-सदन श्याम सुत,
जो जनमायो अवध मही री॥
सोई दोष एक है तिहरो,
नतु गुण कहि को पार लही री॥
रामहिं निरखि चहत मन बरबस,
लहहिं राज पद द्रुतहिं नही री॥
तो कत लोचन लाभहिं लहिहैं,
अफल मनोरथ दाह दही री॥
राउर-राज यदपि सुख अनुपम,
तदपि नित्य सब इहै चही री॥
सब के वचन एक स्वर सुनिके,
हर्षे हर्षण नृपति तहीं री॥

(१२६०)

गुरु संमत शुभ दिन को सोध।
रामहिं नृप-पद देन चहे नृप, छायो आनन्द औध॥
विधिबस चेरि मंथरा संगहि, कैकइ को बुधि नाशी।
राम-राज तेहि मनहिं न भायो, कीन कोह पति-पासी॥
राजहिं सत्य पाँस में बाँधी, मागेसि दुइ वरदाना।
भरत-राज रामहि वनवासा, सुनत भूप अकुलाना।
सत्य संधता लगति जहर सम, पै रघुकुल व्रत राखन॥
खाट मीठ नहिं कह्यो नृपति कछु, बहत वारि बहु आँखन।

(१२६१)

दशरथ देखत केकइ काहीं।
मृत्यु मोर बनि नारि खड़ी यह, प्राण बची अब नाहीं॥
समुझाये समुझति नहिं केहुके, कहब वृथा कछु याही।
शीश धुनत पछिताय गिरे भुंइ, रटत राम अकुलाहीं॥
सचिव मुखहिं नृप-खबरि पायके, राम आय पितु पाहीं।
शीश नवाय विकल लखि राजहिं, कारण जानन चाही॥
प्रणमि केकइहिं जानि प्रसंगहि, फूले सुख न सामाहीं।
नृपहिं बुझाय कौशिला गेहहिं, हर्ष गये बन-राही॥

(१२६२)

जननी-पद प्रभु प्रणमें आय।
मुदित कौशिला अंक बिठाई, प्यारी सहज सुभाय॥

कही कछुक मनभावन पावहिं, अन्न मधुर रस दाय।
ललित ललन लखिहौ सिंहासन, सहित सिया छवि छाय॥
कब आइहि प्रिय काल्ह सो वेला, करहिं तिलक मुनि राय।
सुनत सचिव सुत कहेउ सब, राम आज वन जाय॥
सुनत सहमि मूर्च्छित महि माता, गिरी अधिक अकुलाय।
निरखि नेह शंकित हिय रघुवर, बहु समुझाव जगाय॥
विपिन गवन की आयसु मांगे, हर्षण शीश झुकाय।

(१२६३)

ललाजी कैसे रहिहैं प्राण, हमारे तन के तीर।
भला कहु तिहरे बिरहैं सान, सम्हारें कसके धीर॥
जननि अरु जनक की आज्ञा मान, पधारैं वन में वीर।
कहहुं कत करहुहिं प्यारे काह, अभागिनि ह्वै के सह पीर॥
तुमहिं जौ राखहुँ बढ़ै विरोध, तिया व्रत नाशै हीर।
सदा शुचि सबके प्रेमी आप, सजावैं वल-कल चीर॥
सबैं नर नारी रउरे धाम, तजेंगे प्राण समीर।
जान जो कहहुं हर्षण वत्स, कहहिं गे सब बे पीर॥

(१२६४)

भरत भुआल होहिं मोहिं भायो।
जो तुम सोइ गुनि केकइ नन्दन, तिनके प्रीति प्रतीति बढ़ायो॥
तिहरे राज हानिते मोहिं कहँ, तनिकहु दुख नहिं हृदय लखायो।
तव अपमान कलेश न मनमहँ, भरत राज सुनि श्रवण अघायो॥

एकै आँच अँवा सम तन कहँ, अबहूँ लाल दुसह दहकायो।
जो वन गवन सुनायो श्रवणन, अति अनुचित सब काहिं जनायो।।
सुठि सुकुमार मधुर मोरे बारे, उमिरि थोरि पन चौथ न आयो।
कारण कौन निठुर बनि केकइ, काढि कलेजा मोर दुरायो।।
हर्षण कहति कौशिला बिलखति, निरखि राम जननिहिं समुझायो।

(१२६५)

भैया आज विमात्र हमारी।
बड़ो काज कीन्हेउ मम सब विधि, भेज वनहिं सुखकारी।।
भरत राज सुनि जो सुख पायों, सो स्व-राज नहिं पा री।
सुफल मनोरथ भयो कहहुँ का, आनँद सिन्धु समा री।।
शिर धरि आयसु जननि जनक की, रहहुँ सदा वन चारी।
समय पाय स्वप्नेहु नहिं चूकहुँ, आर्य धर्म व्रत धारी।।
सत्य-सन्ध दाशरथी रघुवर, कहि मोहिं जगत पुकारी।
तेहिं ते जननि प्रसन्न वदन रहु, बन बिच हर्ष अपारी।।

(१२६६)

रहि न सको तो जावो रघुवर।
वरस चारि-दश मुनियन मध्ये, बसि के समय बितावो।।
निठुर जननि कहँ भूलि न जैयो, अवधि बिताय के आवो।
प्यारे प्यारे मुख सरोज ते, मोरे दृगन जुड़ावो।।
होनी होय सो होवै लालन, चलत न एक उपावो।

सहिहौं सबै जो दैव सहाइय, कर्म विपाक को गावो॥
हौं अभागिनि के भाग तुमहिं इक, सत्य वचन पतिआवो।
अस विचार हर्षण जस भावै, करहु कहा बस जावो॥

(१२६७)

देखु लला यह जनक दुलारी, बैठि वनहिं की किये तयारी।
कानन गवन सुनी निज कानन, राज वेष द्रुत दीन बिगारी॥
तिहरे संग चलन को चाहति, मुनि–वसना मोचति दृग वारी।
अति सुकुमारि न वन के योगू, नयन पुतरि मम प्राण पियारी॥
लाड़िलि भवन रहै कहि अम्बा, अवशि होय मोहिं प्राण अधारी।
जो तुम कहहु सिखाय के सीतहिं, राखहुँ अवध वनहिं दुख भारी॥
सुनत राम स्वयमहिं समुझाये, जेहि ते साथ न जाय पियारी।
हर्षण रहब बात जिय जारति, जनक सुता सुनि सुधिहिं बिसारी॥

(१२६८)

लाभ कहा सँग बनहिं सिधाये।
सम्मत मोर मातु सुख हेतहिं, जो न रहहु घर भाव दृढ़ाये॥
विपिन विपत्ति हृदय नहिं आनहु, जेहिं सुमिरत धीरहु घबराये।
पुनि पुनि कहौं रहहु इत सुख ते, चन्द्र वदनि नित चित में चाये॥
पिय के वचन सुनत सुकुमारी, मुरछि परी सब सुधिहिं भुलाये।
प्राण–हानि हिय गुनि रघुनन्दन, चलन कहे सुठि सरल स्वभाये।
सुनि सुख मानि तयार भई सिय, तेहिं अवसर लछिमन तहँ आये।
करि प्रणाम कम्पत कर जोरे, हर्षण खड़े चरण चित लाये॥

(१२६९)

लखन मन लागत नहिं वन जाय।
राम सिया रहि धाम अयोध्या, राज करहिं रस छाय॥
सकल विघ्न बिन श्रमहिं विनासहुँ, विधि की कहा चलाय।
नृप-केकइ की बात व्यर्थ गिन, बूढ बुद्धि भ्रम छाय॥
भरत सहाय जो रुद्र गेरहौं, आवै सेन सजाय।
वरषि बाण सब काहिं गिरावौं, पुनि नहिं सिरहिं उठाय॥
जानि लखन मन श्री रघुनन्दन, आर्य धर्म समुझाय।
हर्षण पितु आज्ञा अवधारण, श्रेष्ठ श्रेष्ठ कह गाय॥

(१२७०)

भैया लखन रहो घर माहीं।
राउ वृद्ध पुनि विरह विकल है, दुखित देह सुधि नाही॥
भवन भरत-रिपुसूदन सूनो, पुरजन हिय अकुलाहीं।
तिहरे रहत सबहिं सुख होई, मातहु कष्ट न पाहीं॥
अस विचार अवधहिं बस हर्षण, करहु सुखी सब काहीं।

(१२७१)

राम वचन सुनि लछिमन भय से।
सिहरे बदन सूखि गे तहँ ही, परसत पालहिं पंकज जैसे॥
बहुरि धीर धरि सियहिं निहारत, बोले विकल वारि दृग छयसे।
नाथ बिना मोहिं कछुक न भावत, धर्म कर्म बहु ताप तपैसे॥
अर्ध क्षणहुँ नहिं प्रभु बिनु जीवहुँ, हिय परतीति कहेउ मैं ऐसे।

शेषी स्वामि स्वतंत्र तजहिं मोहिं, कहा बसाय करहु रूचि जैसे।।
मैं परतंत्र शेष तव रघुवर, तुम बिन अन्य न जानहुँ कैसे।
मातु बिना शिशु कहँ नहिं कोऊ, रहि न सकै तेहि बिनु गुनु तैसे।।
हर्षण जाग्रत-स्वप्नकी सेवा, तजहु नाहिं करिहौं मुद म्वैसे।

(१२७२)

मोहिं बिन रहि न सको तो लछिमन।
जाइ मातु सों आयसु माँगी, चलो चलो तुम ततछन।।
तनिक विलम्ब न मो कहँ भावति, वनहिं जाँव सत सुख सन।
मातु केकइहिं सुखी करहुँ द्रुत, करि मुनि वेष मुदित मन।।
हर्षण भाग विभूति जगी मम, पिता वचन वन गवनन।

(१२७३)

चले जननि पहँ लखन सुखारी।
राम रजायसु पाय हर्ष अस, नृप पद रंक लहारी।।
जाइ सुमित्रहिं किये दण्डवत, कही कथा दुख कारी।
सुनि वन गवन सहमि ह्वै मूर्छित, गिरी भूमि भय पा री।।
ह्वै प्रकृतस्थ कही हे लक्ष्मण, तुमहु बनहु वन चारी।
जहाँ राम तहँ अहै अयोध्या, तहैं तुमहिं सुख भारी।।
जननि जनकजा राम जनक तव, हर्षण हृदय विचारी।
जिमि अविवेकी पुरुष शरीरहिं, सेयउ सबहिं प्रकारी।।

(१२७४)

तिहरे लागि राम वन जाही।
निज पद सेवा-भाग भली विधि, देन चहैं तुम काहीं॥
परम शान्ति सुख पावहु जेहि ते, अन्य हेतु कछु नाहीं।
तेहि ते सकल विकार बिहाके, ह्वै निर्मल मन माहीं॥
अहनिशि करि कैंकर्य सबहि तुम, राख्यो रुचि जिमि छाहीं।
राम सिया सुख सानहिं हर्षण, सोइ करतब तव आही॥
जगत पूज्य होइहौ तिन नाते, प्रीति रीति अवगाही।
मातु वचन सिर धरि पुनि प्रणमी, गये तिय्रा के पाहीं॥

(१२७५)

मै वन नहिं लै जाऊँ प्रिया तोहि।
राम सिया कैंकर्य में किंकर, निरत रहै सब ठाऊँ॥
तिहरे साथ सधी नहिं सेवा, धर्म जाय अघ आऊ।
तेहि ते रहहु घरहिं बनि भजनी, होवहु मोर सहाऊ॥
पति के वचनन सुनत उर्मिला, बोली शीश झुकाऊ।
जेहि विधि सुखी रहहिं प्रभु मोरे, सोइ मैं करहुँ उपाऊ॥
अवाशि जाय वन सेवहिं स्वामिहिं, मै धरि तिहरि रजाऊ।
घर को वन गुनि वसिहौं इतही, जपत राम सिय नाऊ॥
हर्षण चरण कमल चित लाई, चौदह वर्ष बिताऊँ।
सुनि मन मुदित चले जहँ रघुवर, लखन लाल चित चाऊ॥

(१२७६)

प्रणमें प्रभुहिं सुमित्रानन्दन।
रामहु सुखी पाय भल साथी, सजिवन–साज हर्ष हिय–चन्दन।।
करि प्रणाम कौशिल्यहिं तीनहु, आशिष प्यार लहे सुख कन्दन।
राम–लखन–सिय पितु पहँ गवने, शीश नवाय नृपहिं जग वन्दन।।
आयसु मागे द्रुतहिं चलन हित, धुनत माथ सुनिके दशस्यन्दन।
रोवत हिचकत प्रलपत महि महँ, वरणि न जावै करुणा क्रन्दन।।
प्रभु उठाय बहु विधि समुझावत, समुझत नहिं श्री अज के नन्दन।
कोटि यत्न किये पुत्रहिं राखन, रहत न जाने त्रय निर्द्वन्दन।।

(१२७७)

पिताजी हिय में तनिक न हारैं।
मोरे नेह विवस दुख साने, धी में धीरज धारैं।।
सत्य–सन्ध रघुकुल तुम जाये, मन में तनिक विचारैं।
सब प्रकार मैं राउर को हौं, दास धर्म व्रत सारैं।।
जेहि प्रकार सुख सुयश तिहारो, कैसेहु टरै न टारे।
सोइ हम करहिं सहज सुख बोरे, श्रुति मर्याद सम्हारैं।।
सोइ स्वारथ परमारथ जान्यो, अन्य न और निहारैं।
जननी–रुचि को राखि के हर्षण, अइहौं अवध अगारैं।।

(१२७८)

केकइ माँ सुन लीजै, कहउँ कर जोरी।
प्रेम दशा नरपति की देखी, मन में शंक न कीजै।।

करि मुनि वेष बनौं वन जीवी, अबहिं अबहिं मति खीजै।
जननि जनक रुख जानि के प्रमुदित, काह न करौं पतीजै।।
गिरते गिरौं समुद्र समावौं, अग्नि जरौं सुख भींजै।
विष को पिऔं सकल सुख त्यागौं, आशिष तू मोहिं दीजै।।
मोरे प्राण भरत को नृप-पद, दै के सुख सह जीजै।
हर्षण जन्म बितावों वन में, तोहि हित सत्य कहीजै।।

(१२७९)

रामहिं करत प्रणाम नृपति उर लाये।
अंक बिठाय चूमि मुख मोहक, नयन वारि अन्हवाये।
गदगद कंठ कहत हे लालन, तुम बिन जियब न भाये।
आँख ओट होतहिं तन त्यगिहौं, वचन असत नहिं गाये।
वचन मोर तजि रहहिं अयोध्या, जबलौं भरत न आये।
भरतहिं भेंटि किहेव जो भावै, मम कर्मन भुगताये।
सुकृत-सुयश-सुख-स्वर्ग न तुम सम, मैं न चहौं पति आये।
तव मुख देखि नरक दुख भोगत, हर्ष न हृदय डेराये।

(१२८०)

पिताजी मैं तो पुत्र को धर्म धरी।
करहुँ दण्वत बार सहस्त्रन, छम अपराध ढरी।
पुत्र सोइ जो पितु को भय हरि, पठवै धाम हरी।
पितु को धर्म बचावन सेवा, पायो सुखद घरी।

अमृत त्यागि विषहिं नहिं गहिहौं, जानहिं बात खरी।
अवधि बिताय बहुरि पग देखिहौं, आनँद अवध झरी।
मैं वन सुखी स्वभाविक सब दिन, छोड़हिं सोच-डरी।
अस कहि राम-लषन-सिय नृप कहँ, हर्ष प्रणाम करी।

(१२८१)

प्रभु जननि जनक कहँ प्रणमि चले।
सुर-गुरु-विप्र-साधु सन्माने, दान विविध दै विनय भले।
जे जे रहे जीविका हीना, लहि वरषावन प्रेम पले।
याचक किये अयाचक रघुवर, दीन लुटाय विभूति ढले।
तापस वेष विशेष उदासी, धरे राम सिय लखन लले।
जाइ गहे गुरु चरण हर्ष युत, शीश धरे रज प्रेम गले।
करि विनती लहि आयसु प्रमुदित, पुनि पुनि करत प्रणाम तले।
हर्षण हृदय लिये मुनिनायक, किय अभिषेकहि नयन जले।

(१२८२)

सचिव-साधु-गुरुवरहिं निहोरे।
सादर शीश नवाइ सबहिं कहँ, बोले राम कमल कर जोरे।
राउ वृद्ध मम विरह वह्नि ते, जरत अवनि सुख तृण सम तोरे।
सोइ सब भाँति मोहि सुख दायक, जेहिते लहहिं नृपति सुख कोरे।
समय समय समझावत रहिहै, करहिं न शोच मोर दुख बोरे।
भरतहु बैठि सिंहासन सेइहैं, इक समान सब मातन मोरे।

जेहिं उपाय नृप-प्रजा सुखी रह, करिहैं सोइ कहेउ छल छोरे।
हर्षण वर्ष चतुर्दश वन बसि, देखिहौं आय अवधश्रम थोरे।

(१२८३)

सखी सखा सब दासी दास।
सीताराम विरह भय आतुर, छोड़े जीवन आस।
रोइ रोइ महि मुर्छित गिरिके, विलपत व्याकुल ह्रास।
भली भाँति समुझाय कहे प्रभु, करहु न अपनो नास।
सेवन मोर सबहिं पुनि लहिहौ, करहु कनक-गृह वास।
धरहु धीर तम तोम दुरहिगो, होई अतिहिं उजास।
जात अवधि दिन देर न लगिहैं, रहिहौ सदा सकास।
सबहिं बोध दै हर्ष चले हरि, तनि मुख म्लान न भास।

(१२८४)

हाहाकार मच्यो पुर हाय, चले वन प्राण प्रिया।
चलत राम सिय लखन जानि जन, रोय रोय चिल्लाँय।
ठाडे गिरत मुरछि महिं माहीं, बिलपत व्याकुल काय।
पशु-खग-मृग दृग वारि विमोचत, शब्द करहिं दुख छाय।
हा रघुवर हा सीते कहि कहि, तलफत सुधि बिसराय।
कहा कथा तहँ नर नारिन की, प्रेम मूर्ति जग जाय।
पुरी अनाथ अभागिनि दर्शति, पति बिनु तिय न सुहाय।
हाय हाय रव चहुँदिशि छायो, भूमि दरारहिं खाय।

(१२८५)

अवधहि कीन्ह प्रणाम, सिया सह लछिमन राम।
कहे वचन अभिराम जोरि कर सुन्दर श्याम।
अब तक रहा अन्न जल तुम में, अब उचट्यो नहिं थाम।
छमि अपराध किहेउ बड़ि दाया, आपुहिं मान्यो माम।
जेहिते जननी जन्म भूमि कहँ, पुनि लखि लह विश्राम।
हर्षण लीला ललित करत नित, सेवौं तोहिं अठयाम।

(१२८६)

जय जय तरल तरगे सरजू।
जय वाशिष्ठी प्रेम प्रवाहिनि, ब्रह्म-दवे सुख करजू।
सरितन की ठकुराइन जय जय, दरश करत दुख हरजू।
करौं प्रणाम कहत रघुनन्दन, सिय सौमित्र सुढर जू।
हर्षण बहुरि विलोकउँ आई, करेहु कृपा यह अरजू।

(१२८७)

राम चले वन अवध अँधेरा।
घर मसान परिजन लग भूता, अतिहि भयानक अहनिशि बेरा।
सुत-हित-मीत-मनहु यम किंकर, गृह गृह पर्‌यो काल को डेरा।
मृत्यु राति सम प्रकृत-प्रभा सब, दौरति खान वक्र भौं हेरा।
देखि न जाय पुरी प्रभु सूनी, कीन्हो तहाँ विषाद बसेरा।
भय भरि निकरि भगे विरहातुर, बाल वृद्ध नर नारि के घेरा।

राम–सियहि पछि आय चले सब, बहुरन हित यद्यपि प्रभु प्रेरा।
हर्षण निश्चय किये मनहिं मन, रहिहै सँग सदा हरि चेरा।

(१२८८)

राम गये वन प्राण न जाहीं, काह करौं मैं दैव।
केहि सुख लागि रहे तन पिंजर, उड़ि न जायँ तिन पाहीं।
समुझि समुझि उर आतुर दशरथ, मुरछि परत महि माहीं।
जल बिनु मीन तथा नृप तलफत, हृदय अधिक अकुलाहीं।
रथ चढ़ाय रघुवर लै जावहु, कह्यो सुमंतहिं काहीं।
बिपिन दिखाय गंग नहवाई, फेरहु यत्नन राही।
नतरु मरण अवशहि मम मानहु, राम बिना मैं नाहीं।
हर्षण रामहिं रथहिं चढ़ायो, सचिव विनय करि चाही।

(१२८९)

रथ चढ़ि चले लखन सियराम।
पीछे आगे दाँये बाँये, चलत पुरुष पुर वाम।
आँख अश्रु बहु स्वेद चुअत तन, कंपत बदन तमाम।
गिरत परत लरखरत जाहिं मग, भूलि सबहिं धन धाम।
फफकत सिसकत हाय कहत सब, सुमिरत प्रभु गुण ग्राम।
लिपटि रहे रथ पकरि पकरिके, अश्व रास कोउ थाम।
येन केन विधि तमसा पहुँची, किये सबहिं विश्राम।
हर्षण जलहु लिये नहि कोई, सहित लखन सिय राम।

(१२९०)

हरि–इच्छा श्रम बस सब सोये।
अर्ध रात्रि उठि राम सुमंतहि, कहेउ वचन जिय गोये।
खोज दुराइ रथहिं कह हाँकहु, अन्य उपाय न होये।
जैहैं संग नतरु सब लोगू, प्रेम विवश सब खोये।
सुनत सचिव अस रथहिं चलायो, ढूढ न पावहिं लोये।
प्रातः जागि सबै सिय रामहिं, बिनु पाये दुख मोये।
इत उत करि अन्वेषण थाके, रथ को चिन्ह न जोये।
हर्षण विरह विकल पुर लौटे, कूट माथ सब रोये।

(१२९१)

पुरि तो बनी वियोगिनि नारी।
पति विहीन कृश–मलिन दुर्भगा, नहिं भावत घर द्वारी।
भूषण वसन बिना नहिं सोहति, बिखरे केश बिगारी।
खाब पियव सब भूली दुख भरि, विरह वह्नि जिय जारी।
राग रंग कछु मनहिं न आवत, दृग ते बहत पनारी।
दिन नहिं चैन रैन नहिं निदिया, शोक सनी हा कारी।
नयन न सूझ सुनात न श्रवणहिं, बोलत नाहिं सम्हारी।
हृदय करोबै सुरति कसकि कै, छिन विश्रान्ति न आ री।
हर्षण तेहिं लखि बज्रहु पिघलत, चेतन दशा न गा री।

(१२९२)

अहनिशि वर्षत बदरवा रे।
पुर नर नारि नयन गगन ते, ओनइ ओनइ जल धरवा रे।
बड़े वेग बड़ि बूँदके गिरतहि, सिमिटि होत नदि नरबा रे।
सो सब सरयू जाय मिलत हैं, बाढ़ गई सोउ सरबारे।
तटनि सरोजा तट वसि पुरिया, लयहिं लये सब घरबारे।
पशु पक्षी भूरुह नहिं बाँचे, जीव जन्तु जल चरबा रे।
कर्ण धार लै नौका पहुँचे, निकरे नहिं मझधरबा रे।
हर्षण मीजत हाँथ मलाहहु, भींज गये भय भरबा रे।

(१२९३)

रघुवर रथ पहुँच्यो सिंगरौर।
सुनि निषाद आयो सह ज्ञातिहिं, किय प्रणाम दृग बोर।
ताहि उठाय राम हिय लाये, जानि सखा सिरमौर।
सिय कहँ प्रणमि लखन पुनि सचिवहिं, पुनि पुनि करत निहोर।
पुरहिं पधारन हेतु विनय करि, कहेउ मोर गृह तोर।
ग्राम बास नहिं उचित कहे प्रभु, पितु निदेश बड़ जोर।
सुनत कथा व्याकुल है केवट, कहेउ केकई खोर।
निकट शिंशुपा तरुहि तरे शुचि, कुश पल्लव दसि और।
राम लखन सिय साथरि कीन्हेउ, हर्षण विकल विभोर।

(१२९४)

सब विधि किय निषाद सेवकाई।
कंद-मूल-फल खाइ सबहिं सह, सोये सिय-रघुराई।
साथरि शयन निरखि गुह गरिगो, नयन नीर झरि लाई।
प्रभु पद चाँपि लखन उठि रक्षत, जागि निशा तेहिं ठाई।
शंकित तहाँ निषादहु बैठेउ, चापहिं बाण चढ़ाई।
देखि दुखी लछिमन समुझाये, मोह रूप जग भाई।
राम ब्रह्म परमार्थ स्वरूपा, दुख सुख परे अमाई।
त्रिकरण प्रभुपद नेह नहावहु, जो जिउ स्वार्थ कहाई।
करत बात निशि बीती हर्षण, किय नित कर्म नहाई।

(१२९५)

भेजे सचिवहिं प्रभु समुझाय।
यद्यपि विनय कियो बहु फेरन, लागि न तदपि उपाय।
मंत्रि प्रवर तुम जाहु अयोध्या, कहे राम चित चाय।
जेहि ते करै प्रतीत केकई, संशय सकल विहाय।
पितहिं प्रणाम कहेउ मम पुनि पुनि, मैं वन सुखी स्वभाय।
बहुत बुझायो हिया न लौटति, काह करौं पछिआय।
यहि प्रकार बरबसपुर पठये, कहि सुनि रघुकुल राय।
आपु गये गुह सँग तट सुरसरि, सहित सिया अरु भाय।

(१२९६)

सुरसरि तीरे खड़े हैं आज।
जिनके चरण कमल जन आश्रय, हैं भव सिन्धु जहाज।
जासु नाम भव सागर शोषक, दानि अमित सुख साज।
सोइ कृपालु केवटहिं निहोरत, राम गरीब नेवाज।
लावहु वेगि किनारे नैया, पार उतारन काज।
सुनि माझी बोलत अतुरायो, क्षमा करहिं रघुराज।
मैं निज नाव चढ़ाइ के स्वामी, मरिहौं बिना अनाज।
हर्षण कस पलिहौं परिवारहिं, राखहु रघुवर लाज।

(१२९७)

बिनु पग धोये चढ़ै न देव नैया।
शपथ खाय साँची कह बतिया, सुनियो लला रघुरइया।
क्रोधित लखन बरुक हनि तीरन, पठवे यम की खैंयां।
तन पद धूर प्रताप परम प्रभु, सुन्यो श्रवण सब ठैंयां।
छुअत शिला भै नारि नवीनी, कस न काठ तिय जैया।
पाहन ते नहिं काठ कठिन है, पुनि तरनी कहँ पैया।
जेहि ते पालो निज परिवारहिं, मैं गरीब गोहरइया।
हर्षण थोरिक दूरिमें पाँजी, उतरहिं लोग लोगइया।
आपहुँ जाय तहाँते उतरैं, पाँव परौं बहुतैया।

(१२९८)

देहि प्रभो पद-पदुम को धोवन।
भली भाँति करि स्वच्छ प्रतीतन, परशि परशि पुनि पुनि जल मोवन।
चरण लगी रज अपने कर ते, देहुँ छोड़ाय नाव की खोवन।
तब बिठाय निज नाव उतारहुँ, अबहिं अबहि सत्यहिं जिय जोवन।
तुमहि कहौ बिन पगहिं पखारे, नाव चढ़ाय जन्मभरि रोवन।
लरिका कौने भाँति जिअइहौं, तिय कहँ जाय के काह बुझौवन।
मोरे और कवार न एकहु, बड़ गरीब चाहौं नहिं गोवन।
हर्षण पर्‌यो चरण लखि रघुवर, बिहसे लखन सिया सुख बोवन।

(१२९९)

नेहनि बोरे अटपट रसाल।
केवट के सुनि बैन सियावर, बोले करूणा करिके कृपाल।
करहु सोइ जेहिते तव नैया, बनी रहै दृढ़ चलती सुचाल।
वेगि आनि जल पाँव पखारै, होतो अतिक्रम बेला को ख्याल।
सुनि मन मुदित कठौता पानी, नाविक लायो ह्वै के निहाल।
प्रेम पगे धोवत दोउ चरणहिं, होत मगन लखि दाहिन दयाल।
प्रथम तीर्थ लहि पितर उतार्‌यो, आपु सहित परिवारहि सुकाल।
बहुरि पार किय प्रभु कहँ हर्षण, देखत मूरति बनिके बिहाल।

(१३००)

दिये राघव उदारी विमल भक्ती।
केवट भाग लखत सुर सीहहिं, वर्षहिं सुमन जयति वक्ती।

आपुहि गिनै स्वार्थ के सेवी, भवमें बहे भवहिं रत्ती।
दै अनपायिनि भक्तिहु सकुचत, रघुवर राम निरख शक्ती।
पिय हिय की सिय जाननवारी, मुदरी मुदित दियो तकती।
पै नहिं केवट लिय बहु यतनहु, प्रभुपद पकरि पर्‍यो वक्ती।
नाथ आज मैं काह न पायों, हमरे सरिस हमहिं जक्ती।
हर्ष मजूरी अमित समय की, एकहिं बार लह्यो रत्ती।

(१३०१)

न्हाये निर्मलवारी, सीता लखन धुनषधारी।
सुरसरि पूजि सिया लहि आशिष, भई सुखी सुख सारी।
गुहहि लिये निज सँग रघुनन्दन, सुनि विनयहिं बहुवारी।
सबहिं बिदा करि आगे गवने, वसे बीच निशि पा री।
प्रात नहाय प्रयागहिं पहुँचे, तीर्थ-तीर्थ अविकारी।
देखत श्यामल धवल हिलोरे, सबहीं भये सुखारी।
सविधि त्रिवेणी न्हात मुदित मन, प्रेम पुलक उर भारी।
हर्षण भारत सुनिके भरतहिं, सुमिर आँख अँसुआरी।

(१३०२)

कहत महातम यथा प्रयाग।
सुनत राम मुख हर्ष लखन सिय, गुन निषाद भल भाग।
सुर महिसुर सादर सन्माने, वचन विनीत अदाग।
पार्थिव पूजि पुरारहिं ध्याये, को कह प्रभु अनुराग।
तीरथ वासी भये मुदित मन, पाये फल जप याग।

श्याम वपुष मुनि वेष निहारहिं, प्रेम पगे दृग लाग।
सबहिं दर्श दर्शाइ स्वकहि कहँ, जड़ चेतन लिय जाग।
भारद्वाजहिं जाइ मिले पुनि, हर्षण हिय रस पाग।

(१३०३)

राम लखन लखि लोचन हर्षे।
करत प्रणाम उठाय हृदय लिय, प्रेम पगे मुनि दोउ दृग वर्षे।
सब साधन फल सुन्दर पाये, पर्शि पर्शि अनुभव सुख सरसे।
करि आतित्थ्य हृदय हर्षाये, भाग विभूति चित्त कहँ कर्षे।
सुनि वन गवन कथा प्रभु मुखते, विधि विधान वरणे दुरदर्शे।
करि विश्राम प्रात लै आयसु, जमुना पार भये प्रभु हर्षे।
साँझ समय बट छाँह बसे पुनि, किय सुपास गुह सेवा पर्शे।
हर्षण प्रात कृत्य करि गवने, राम लखन सिय महि रस झरसे।

(१३०४)

आगे राम लखन चल पाछे री।
बीच भूमिजा पथहिं सुशोभित, तेज पुंज त्रय आछेरी।
ज्ञान-विराग-भक्ति जनु विहरत, तापस वेष को काछेरी।
राम सीय पद चिन्ह बचाये, चलहि लखन व्रत आछेरी।
पथ श्रम पाय कबहुँ कहुँ बैठे, सुखद छाँह जेहि गाछेरी।
शीतल जल लक्ष्मण लै आवहिं, अचँवहि सिय पिय पाछेरी।
थकनि मिटावनि पाँव पलोटहि, सेवक काँछ को काछेरी।
हर्षण करहिं बयार मुदित मन, पल्लव विजन ते आछेरी।

(१३०५)

कोउ पथिक बैठे वट छाया निहार है
रूप रासि राजैं द्वै नर एक नार हैं।
सुनत ग्राम के त्वराय, सिगरे नर नारि धाय,
निरखि नयन लाभ लहै नमत बार बार हैं।
बहत आँख अश्रुधारि, लखत लखत दृग न हारि,
रूप प्यास बढ़ति हृदय, तन मन न सम्हार हैं।
नाम ग्राम एक न पूँछ, सकुच रहे आस छूँछ,
जानि जियहि राम कहे, सकल कथा सार हैं।
सुनत श्रवण दुख समोय, सबहिं बाल वृद्ध रोय,
कहहिं कठिन मात पिता, जियत सुत निकार हैं।
मधुर मधुर नृपति लाल, छबि में दोउ बहु विशाल,
कोटि काम वारि जाय, शत शशिहूँ के सार हैं।
तिनहुँ ते सिय सुकुमारि, विरची विधि शोभ सारि,
धरणि धरत पग विचारि, फटत हिय हमार हैं।
प्रेम विवस सबहिं जानि, समुझाये प्रभु सु बानि,
माँगि विदा मगहिं चले, हर्षण हिय हार हैं।

(१३०६)

देखुरी बटोहिया कोउ जात।
युगल किशोर वेष मुनि धारे, सँग में एक नव नारि सोहाति।
ब्रह्म जीव विच माया जैसी, धरणि धरति पग छबि छहराति।

श्याम गौर वपु लोने लोने, लोनी ललना विद्युत गात।
मनहु मदन रति संग वसन्तहु, बने उदासी मग महँ भात।
देखी सुनी न अस सुन्दरता, लोक वेद ते पार लखात।
मुख प्रसन्न मन म्लान न लागत, भोग योग यद्यपि दिनरात।
तड़फड़ात लोचन सखि मोरे, जस जस आँखन ओझल जात।
लाज तोरि दौरहुँ तिन पाहीं, पद छुइ बहुरहुँ हर्षण मात।

(१३०७)

कैसे धारै धीर मोरे सखा सुनु बयना।
लखे पथिक सरि तीर, शोभा सुखद सुख अयना।
लगत नृपति के वारे, धनुष को धारे, पहिरे वलकल चीर।
जात दखिन दृग तारे, सबन हिय हारे, इक तिय दो नरवीर।
इक इक कान सुनाये, सुनन सब धाये, नर नारिन की भीर।
देखत सबहिं बिकाने, चरण लपटाने, ढारत लोचन नीर।
विपिन वास की गाथा, कहे रघुनाथा, सुनि सब विह्वल पीर।
धनि धनि भाग हमारे, कहै सब वारे, इतै रहहिं सुख सीर।
नदी तीर करि कुटिया, परी नहिं त्रुटिया, सेइहैं सब विधि धीर।
या निज सँग में लेवै, करत सब सेवै, वसिहैं उत ह्वै थीर।
सुनि सुप्रेम समुझाई, चले रघुराई, पूँछि पंथ हिय हीर।

(१३०८)

जात मगहि मग मोहनि डार, पथिक प्रिय।
गाँव गाँव आनन्द बिखेरत, सुख सानत नर नार।

मग वासी सब कहहिं बटोहिया, सुठि सुन्दर सुकुमार।
वन के योग अहहिं नहिं एकहु, मधुर मधुर हिय हार।
बिन विचार विधि बूढ़ बिपिन महँ, भेज्यो दूनहिं निकार।
भोग विभूति वृथा जग बिरच्यो, जो न इनहिं दिय वार।
केवल श्रम फल पायो कर में, बाल केलि व्यवहार।
हर्षण हृदय द्रवत लखि हमरो, वज्र बन्यो करतार।

(१३०९)

अलिरी विलोकु, बटोही जात बड़े नीके हैं।
उमिरि युवा में प्रथम रहे चढ़ि, रेख उठति मुख टीके हैं।
श्याम गौर वपु शोभाशाली, युगल पुरुष सँगती के हैं।
कौन कहै जग चेतन की री, जड़हु प्रसन्न सहीके हैं।
जहँ जहँ जाहिं पथिक से तीनो, लखत लोग सब बीके हैं।
आनँद अम्बुधि तहँ तहँ वर्धत, सुखहिं सनत सब पीके हैं।
आँखन ओझल करन न चाहहिं, प्राण प्राण जिव जी के हैं।
हर्षण धनि धनि लोग लोगाई, जिनहि लगत जग फीके हैं।

(१३१०)

जे सर सरित राम अवगाहहिं आली मोरी।
तिनकी भाग कहहि को गाई, देखि देव सर–सरित सराहहिं।
पथ श्रम हरन हेतु जेहिं तरु तर, बैठि छनिक विश्रान्ति समावहि।
ताहि निरखि सुर वृक्षहु सीहत, करत बड़ाई विस्मय पावहि।
जेहि बीथिन पग धरत रामसिय, मन्द मन्द गति जहँ तहँ जावहि।

ताहि प्रशंसत सुरवर बीथिहु, कहति कबहुँ हमहूँ अस भावहि।
महि की भाग अहै अति न्यारो, फूली फूली सुख सरसावहि।
हर्षण लोक विकुण्ठ सिहावत, और लोक का कथा चलावहि।

(१३११)

राम धरत पग, धरणि हृदय हर्षाये।
कंकड़ काँट कुराय दुराई, कोमल बनि भल भाये।
गंधमई सेवति सरसानी, चरण कमल चित लाये।
त्रिविधि वायु बहि पवनहु सेवत, परशि प्रभुहिं सुख पाये।
जहँ जहँ जात राम रघुनन्दन, तहँ मेहहु मेड़राये।
नभ-रवि ओट किये प्रिय छाया, ताप तनिक नहि आये।
झरना झरहिं मधुर मधुवारी, कलकल नाद सुनाये।
हर्षण पंच भूत प्रभु सेवहिं, पथ श्रम परत न पाये।

(१३१२)

वन-मृग निरखत नवल बटोही।
इक टक रहे निमेष न लावहि, चहहिं न तनिक विछोही।
दृग जल पूजि प्रभुहिं पहिरावहिं, प्रणय पुष्प स्त्रग पोही।
निरखि तिनहिं मग बीछी सांपिनि, तजहिं विषम विष मोही।
रूप रसिक सब जन्तु विपिन के, पियत नयन पथ दोही।
सहज वयर विसरायके सिगरे, तजे राग रिस कोही।
निर्भय राम निकट चलि आवहिं, प्रेम पगे तन सोही।
धनुर्बाण राघव कर लीन्हे, तदपि न शंकित होहीं।
हर्षण सुर नर मुनिहु सराहत, धनि ये जे हरि जोही।

(१३१३)

पथ पद-चिन्ह कहहु ये काके।
कबहुँन देखे ऐसे सुन्दर, रेखा ललित लोभाके।
भील भीलनी पूँछि परस्पर, निरखि नयन नहिं थाके।
चरणाङ्कित महि कहँ मुख चूमत, सिर धर रज कछु खाके।
आँखन आँजि विभोर बने दोउ, नृत्यहिं नेह समाके।
दौरि परे दोउ देखन तिनकहँ, प्रीति प्रतीति में छाके।
कछुक दूरि चलि पाये प्रभुकहँ, बैठे तरुतर ताके।
हर्षण किये प्रणाम दूरि ते, नयनन निरख अघाके।

(१३१४)

देखति नृपति कुमार भिलनिया।
ठगि सी रही निमेष न लावति, सहित भील गइ वार।
प्रेम पगी पगली सी दीखति, सुधि बुधि सबहिं बिसार।
नेह निरखि रघुपति सुख साने, पूँछे कुशल अगार।
सुनि मृदु बैन स्वभाव भलो गुनि, बोली वचन विचार।
आयसु होइ रहहिं हम संगै, करिहैं सेव सम्हार।
वन-फल-फूल-कन्द लै अइहैं, समिधा हित निस्तार।
पर्ण-कुटी करिहैं जहँ रहिहैं, झरिहैं पंथ तुम्हार।
सुनि प्रभु हर्ष ताहि घर पठये, बहु समुझाय उदार।

(१३१५)

अनुज सिया सह राम गोसाईं।
चले जात मग आनँद वितरत, सुखी होहिं सब लोग लोगाई।
पहुँचे बाल्मीकि के आश्रम, नयन अतिथि अनुपम छबि छाई।
करत प्रणाम लखत दोउ भाइन, वारि विलोचन मुनि उर लाई।
अति सतकार सेइ प्रभु ऋषिवर, पाये आनँद अतिहिं अघाई।
लहि विश्राम पाइ मुनि आयसु, चले चित्रकूटहि रघुराई।
भये पार मंदाकिनि हर्षे, देखि सुथल सुन्दर सुखदाई।
करहुँ कतहुँ अब कुटी रहन हित, अनुजहि कहे हर्ष सिय साँई।

(१३१६)

भैया कुटिया को बनावौ, सँग सोहैं सिया हैं।
वसिके मंदकिन तीर, पावैं पावन नीर, कछु दिन समय बितावौं।
सुनिके लक्ष्मण लाल, बोले वचन रसाल, मैं तव शेष कहावौं।
नित परतंत्र है दास, राउर रुचि की आस, आयसु को अपनावौं।
देवहिं थलहिं बताय, मन अनुकूल सुहाय, रचि शाला पुलकावौं।
तिहरे सुख सुख पाय, सेवौं अहनिशि भाय, विरही वह्नि जुड़ावौं।
सुन्दर ठांव विचार, आयसु राम उदार, भइहै इतहिं रचावौं।
सुनत लखन हिय हर्ष, कीन्ह कुटी चितकर्ष, किय प्रवेश प्रभु भावौ।

(१३१७)

राजत राम कुटीयुत अनुज प्रिया।
छीर सिन्धु लक्ष्मी नारायण, सोहत जिमि शुचि शेष लिया।

प्रभु प्रसाद ते गिरि भो कामद, सुने श्रवण यश त्रिजग जिया।
सुर नर नाग प्रशंसहि प्रभु कहँ, जब तब आय के दर्श किया।
किये विनय भुंइ भार हरण को, रघुवर सुनि संतोष दिया।
चित्रकूट वस रघुवर सुनिके, मुनि गण आवै प्रेम पिया।
करि प्रणाम प्रभु अति सतकारहिं, मान देइ धनि धन्य धिया।
रूप-शील-गुण-विनय ते सबके, मन मोहन चित चोर लिया।
करि सतसंग सुखी सब होवहिं, पाइ नयन फल हर्ष हिया।

(१३१८)

चित्रकूट रघुनन्दन छाये हैं, सुधि लहि कोल किरातहु धाये हैं।
कन्द मूल फल भरि भरि दोनन, चल दर्शहित लोचन लोलन,
महा निधिहिं ललचाये हैं।
कहत सुनत सब साँवरि शोभा, रोम रोम ते तन मन लोभा,
पहुँचे नेह नहाये हैं।
निरखि नयन पुलकावलि भारी, करहि प्रणाम जोहार जोहारी,
चितवत चित्र के भाये हैं।
प्रेम पेखि रघुवर सुखसाने, कहि मृदु वचन तिनहिं सनमाने,
चितवनि चित्त चोराये हैं।
सोउ कहे हम सब धनि धन्या, पाये दर्शन दिव्य अनन्या,
धनि महि-वन जहँ आये हैं।

सोधि वास इत बसे विचारी, भलो भयो नित रहब सुखारी,
सेइहैं सब चित चाये हैं।
वन को भेद सकल हम जानैं, सबै दिखैहैं रुचि हिय आने,
खेलाइ अहेर अघाये हैं।
हिंसक जीव बरायके रघुवर, करिहैं सेवा सब विधि उरभर,
गिनैं जनम फल पाये हैं।
आयसु देत न सकुचव स्वामी, स्वजन सहित तिहरे अनुगामी,
हमरे भाग ते आये हैं।
श्रुति-मुनि-शंभु अगम सियरामा, सुनत किरातन वचन स्वधामा,
मनहुँ पिता शिशु गाये हैं।
हर्षण प्रभु आश्वासन दीन्हे, राम रजाय सोउ सुख भीने,
निज निज गृहहिं सिधाये हैं।

(१३१९)

राघव रमि रहे प्राण पियारे, कामद विपिन मझारे।
अनुज प्रिया सुख सानहिं जैसे, सोइ करहिं सुख सारे।
सेवहिं प्रभुहिं सिया अरु लछिमन, सबहिं भाँति सब वारे।
जिमि अविचारी पुरुष स्व तन कहँ, त्रिकरण सेइ सम्हारे।
मुनि समाज नित जुरै समय पर, लोचन लाभ को पारे।
करि सत संग सबहिं मन मोदित, राम सुयश को गारे।

जननि जनक अरु अवध भरत की, सुरति लवहिं जब आरे।
हर्षण नेह निवाहन वारे, नयनन नीर बहारे।

(१३२०)

विहरत वसंत गिरिवर विराज, मास बारह लैं सुख को समाज।
सुरभित शुचि फल फूलन के भार, सोहति नवि नवि तरुवर की डार।
पीवत मधुप पुष्पन को पराग, मुखरित वाचा शिक्षत सो पाग।
कुहू कूहु करि कोयल पुकार, श्रवण सुखद दिल लेबति निकार।
नृत्यत नव नव मोरी औ मोर, जहँ तहँ विविध शकुन करत शोर।
शीतल सुगंध बह वायु मन्द, दशदिक दीखत अतिशय अनंद।
मन्दाकिनि कल कल करि निनाद, लहरि स्वतहिं जनु भागहिं विवाद।
वन मृग वन वन करिके किलोल, हर्षण हर्षहिं बिन द्वेष डोल।

(१३२१)

रहहि सुखी सुख प्रद सुखकन्द।
अभय किये वनवासिन सब विधि, भये सबहिं बिन द्वन्द।
परम प्रेम पयसुनी निमज्जहिं, नित्य कर्म अभिनन्द।
त्रिकरण तप राते निशि वासर, चित्रकूट रघुचन्द।
अनुज प्रिया सह वन महँ विहरत, सर्व परे स्वछन्द।
झरना झरत विलोकहि नयनन, केलि करत मृग वृन्द।
मोर नृत्य कोयल कुहुकारी, देखत सुनत सनन्द।
हर्षण हर्ष मुनिन के संगहिं, पग पग परमानन्द।

(१२२२)

प्रीतम संग सिया सुख न समाई।
मधुर मधुर पिय वदन कान्ति लखि, अहनिशि दृगन जुड़ाई।
अवधपुरी को भोग विभूति, भली भाँति विसराई।
कन्द मूल में लहति अमियपन, वन जल में मधुराई।
पर्ण साथरी मयन-शयनते, सुन्दर सुखद सोहाई।
नाह-नेह नित नव लखि वर्धत, आनँद अतिहि अघाई।
सास श्वसुर सम मुनितिय मुनिवर, वन मृग परिजन ताई।
हर्षण प्रभु-पद प्रेम में पागी, सेवति सहज स्वभाई।

(१३२३)

सब समर्थ सिय राम हमारे।
हृषीकेश उर प्रेरक सबके, जनके विषय छोड़ावन वारे।
काल-कर्म-स्वभाव गुण भक्षक, माया पति सुख के सुख सारे।
जिनके सुमिरण ते जग जीवहु, भव तर काम-मोह-मद मारे।
तिन कहँ नहिं वन वसिवो अचरज, जो गृह त्यागिके भोग विसारे।
लीलामय की लोनी लीला, सच्चिद आनँद मयी विचारे।
घर वन सुख दुख गिनहिं एक सम, गुण गोतीत परावर पारे।
लखनहु ललित युगल पद सेवत, हर्षण हर्षत हिय कहँ हारे।

(१३२४)

उत सुमन्त हिय भरे विषाद रे।
विरह विकल प्रभु के पुर गवन्यो, कहत जियब जग वाद रे।

राम वियोग फटत नहि तनुआ, केहि सुख लालच लाद रे।
हा अति अधम रही नहिं अन्तहु, रंग्यो न हरि के पाद रे।
तलफत विलपत सिर कहँ कूटत, गया सकल अहलाद रे।
देखि दखिन हयहूँ हिंहनावत, तरफरात मन माद रे।
हाँकत रथहिं यतन करि सेवक, संगहि रहे निषाद रे।
येन केन विधि अवधहिं पहुँचे, राम सिया को याद रे।

(१३२५)

सुनो रे मन प्रभु विमुखी अँग अङ्ग।
जो नहिं छुट्यो तो लाज करहु कत, सहहु मृत्यु दुख दंग।
राम सिया बिनु पुर महँ प्रविशेउ, कारिख लगी अभंग।
बाहर छिपे काम नहिं सरिहैं, मूरख मति को पंग।
वज्र हृदय करि नृपहिं सुनावो, राम गये वन बंग।
प्रिय के विरह जियब भल लागेव, भुगतहु फल भव संग।
यहि विधि सचिव तनहिं धिक्कारत, पाय राति को रंग।
करि दुआर रथ चुपके पहुँच्यो, नृपति भवन मन भंग।

(१३२६)

कहि जय जीव प्रणाम कियो सो।
सचिव वचन सुनि आँख उघारे, भूपति मरत जिओ सो।
ललकि कुशल पूँछत अतुराई, आँसुन झारि दियो सो।
कोटि यत्न लौटे नहिं सत व्रत, कहे सुमन्त भियो सो।
चित्रकूट पहुँचाय के केवट, सुधि दै मोहिं पठयो सो।

सुनत नृपति अकुलाय के तलफत, जल बिनु मीन हियो सो।
आये मन्त्रि अकनि कौशिल्या, आई शोक कियो सो।
सहित सुमन्त रानि समुझावहिं, पति सिर क्रोड लियो सो।
रवि कुल रवि अथयो अब चाहत, हर्षण समुझि धियो सो।

(१३२७)

आवो मोरे दृग पथ में ललि लाल।
निरखे बिन नयना नहिं मानैं, असुअँन बहत पनाल।
सूझ गई फूटन अब चाहत, करियो कृपा कृपाल।
प्राण पखेरुहु तन पिंजर ते, उड़न चहत यहि काल।
अहह कष्ट का कहहुँ अवहिं को, मीन नीर बिनु ताल।
प्राण-प्राण सुख-सुख जिउ-जीवन, हा मम वत्स विशाल।
हाय राम घनश्याम पिता तव, तुम बिन मरत बेहाल।
हर्षण विकल पर्‍यो महि मुर्छित, रामहिं रटत नृपाल।

(१३२८)

राम राम हे राम, विलपत नृपति कहाँ गये राम।
पितु-हित पपिहा के सुख दाता, अवध गगन घनश्याम।
हाय जानकी लखन लाड़िले, हा प्रिय वत्स ललाम।
हा रघुनन्दन प्राण के प्रीतम, तुम बिन जिअत बेकाम।
राम राम हा राम उचारत, राम राम हा राम।
रघुपति विरह त्यागी तन अपनो, राउ गये दिवि धाम।

देखि दशा रानी धुनि माथहिं, रोवति गुनि गुण ग्राम।
हाहाकार मच्यो पुर अन्तः, भय प्रद निशिहु तमाम।

(१३२९)

नृपति–मरण की बात प्रात पुर फैल गई।
यथा जहर के खातहि तन पुरि, विष की बाधा बगरि गई।
शोक सने सिगरे नर नारी, प्रलपत अँखियाँ अश्रु लई।
हा हा कार मच्यो नृप महलन, दुःसह दशा विषाद मई।
वामदेव वशिष्ट सुनि पहुँचे, अन्तः पुरहिं प्रबोध जई।
काल–कर्म गति समुझि के रानी, धीरज धरी विवेक पई।
तेल नाव भरि नृप तन राखेउ, कैकय भेजे दूत कई।
भरतहिं मुनिवर बोलि पठाये, हर्षण नृप सुधि नाहिं दई।

(१३३०)

भरत बसे मातुल के भवना रे।
भयप्रद स्वप्न देखि दुख मानत, लखि असगुन शिव के गृह गवना रे।
जननि जनक भल भ्रात भलाई, मागत करि अभिषेक सुहवना रे।
गुरु बोलाय पठये दोउ भ्रातन, पहुँचि सुनाये प्रणमि के धवना रे।
सुनत समीर वेग हय हाँके, आये भरत अवधपुर पवना रे।
लागत पुरी भयानक सूनी, म्लान मुखहिं नर नारि न फवना रे।
कोउ कछु कहहिं न कोउ कछु पूँछै, जाहिं जोहरि गवहिं दुख दबना रे।
हर्षण केकइ भवन भरत चलि, मातहिं लखे प्रसन्न स्व भवना रे।

(१३३१)

केकइ द्वार भेंटि करि आरति।
भरतहिं भीतर भवन ले आई, पूँछि कुशल सुख सारति।
भरतहुँ पूँछ कुशल कहँ भूपति, कहा कौशिला कारति।
सिय-प्रभु लखन कहहु कुशलाई, कटु केकई मन मारति।
पाय मन्थरहिं विपति संगिनी, साधी काज उचारति।
एकहिं काज बिगारि गो बीचहिं, नृपति मरण हिय हारति।
सुरपुर गवन पिता को सुनिसो, प्रलपत आँसुन झारति।
चलत न निरखे नयनन तुम कह, अति अभाग जिय जारति।
रामहिं सौंपिन मोहि कहँ हर्षण, किय न अभय भय दारति।

(१३३२)

कहु पितु मरण हेतु री माई।
सुनि सुत वचन स्व करणी केकई, आदि अन्त लौ वरणि सुनाई।
कान परत वनवास रामको, मुरछि परे भुंइ भरत भुलाई।
अन्तर कसक करोवति छाती, विलपत व्याकुल वरणि न जाई।
रोय रोय दृग नीर बहावत, हे सीते हे रघुवर गोहराई।
समुझि स्वहेतु ग्लानि जिय जरई, लहन शान्ति नहिं दीख उपाई।
कटुक वचन कहि जननिहिं त्यागेव, लियो सुवन सम्बन्ध उठाई।
ताही समय मन्थरा पहुँची, निज तन भूषण वसन सजाई।
हुमकि लात तकि कूबर मारे, रिस भरि लखत लखन लघु भाई।
जीगर पकरि घसीटत हर्षण, भरत दया वश दीन्ह छोड़ाई।

(१३३३)

छोड़ो लाल याकी झोटिया लुओ न।
यद्यपि तुम शत्रुघ्न सत्य सत, पै यह नारी जात छुओ न।
जो सुनि कहुँ रघुनन्दन पैहैं, बिगरो बिगरी तात गुनो न।
राम विमुखि केकइ सिर कटतेउँ, तनिक शंक नहिं सत्य सुनो न।
मातृ विघातक सुनि प्रभु त्यगिहैं, आर्य-भयहि भरि ताहि हन्यो न।
भरत वचन सुनि रिपुहन छोड़े, जरत जीव पै हनत बन्यो न।
कूबर टूटे फूट कपारहिं, रुधिर वमत सो गई गर्‌यो न।
हर्षण मन्थर बुद्धि मन्थरा, बकति अहो मै अहित कर्‌यो न।

(१३३४)

भरत सहानुज तपत घना रे।
गये कोशिला गेह भरे दुख, अश्रु बहत दृग कंप तना रे।
देखि जननि आतुर उठि दौरि, गिरी भूमि झँइ कृषित पना रे।
भरतहु गिरि भहराय चरण में, पितहि लखाव हे अम्ब भना रे।
बहुरि बताव राम सिय मोही, त्राहि त्राहि अति पाप सना रे।
मैं वन गवन हेतु ह्वै पापी, मुख दिखाव नहिं लाज कना रे।
काह करौं कहँ जाँव न सूझै, कोउ नहिं मेरो जगत जना रे।
इक अधार रघुवीर गोसाईं, हर्षण मम लगि सोउ बना रे।

(१३३५)

राम मातु गहि भरत उठाई, रोवति रोवति।
धूरि झारि मुख पोंछि अश्रु दृग, प्यारति अपने अंक बिठाई।

कही दोष नहिं तिहरो ताता, मम अभाग सुत वनहिं पठाई।
सुनि वनबास प्रसन्न वदन ह्वै, सिया अनुज सह गये गोसाई।
सो सुत बिछरत प्राण गये नहिं, रहे तनहिं महँ अधिक लोभाई।
जीवन–मरण नृपति सत जाने, जीवत रामहिं रहे खेलाई।
होत वियोग तनहि तजि तृण सम, प्रीति रीति सब कहँ देखराई।
हर्षण वज्र हृदय हा मेरो, कहति कथा उर की कठिनाई।

(१३३६)

भरत प्यारे लागो यथा मोहिं राम।
जो सुगाई तुम कहँ जग वारे, सो न लहैं विश्राम।
संशय तनिक न तिहरे ऊपर, विधिहिं भयो मोहिं वाम।
राम लखन सिय वनहिं सिधाये, राउ गये सुर धाम।
मम अभागिनी के अवलम्बन, एक तुमहिं दुख ठाम।
सुनि वर वचन मातु के भरतहु, खाये शपथ प्रणाम।
विपति बीज जग जनमेउं यद्यपि, केकइ जठर निकाम।
तदपि मोर नहिं संमति या महँ, जानहिं हरि हर माम।
हर्षण रोय गिरे पुनि चरणन, लिय कौशिल्या थाम।

(१३३७)

आये भरत सुने गुरु ज्ञानी।
सचिव सहित द्रुत पहुँचि तिनहिं पहँ, समुझाये कहि कहि मृदु वानी।
काल कर्म विधि गति भवितव्यहि, कहे घटन अवशहिं अकुलानी।

शोक त्यागि जो अवसर आजहिं, करहु क्रिया पितुकी श्रुति वानी।
गुरु-पद-रज अरु आयसु सिर धरि, करन कहे भल भरत विधानी।
करि बहु विनय मातु गृह राखे, रहीं जननि प्रभु दरश लोभानी।
परम विचित्र विमान में नृपकहँ, चले चढ़ाय वाद्य धुनि ठानी।
सरयु तीर रचि चिता बनाये, सुर सोपान मनहु सुख दानी।
हर्षण भरत मुखाग्नि को दैके, विधिवत दिये तिलाञ्जलि पानी।

(१३३८)

किये भरत दश गात विधान।
पितु हित किये भरत जस करणी, शारद शेषहु सकैं न गान।
सबहिं भाँति बहु दान विप्रगण, पाये अतिशय हृदय अघान।
महा भोज करवाय सबहिं को, कियो यथावत सुठि सन्मान।
रिक्त जानि मुनिवरन बोलाये, आये भरत सभा सकुचान।
करि प्रणाम दीनासन बैठे, कह वशिष्ठ जग रीति बखान।
दशरथ मरण शोक को त्यागहु, सोच योग नहिं नृपति महान।
सत्यसंध सुख सुकृत सुशय लहि, हर्ष गये पर धाम सोहान।

(१३३९)

रामहिं तजे वचन नहिं त्यागे हैं, प्रेम प्रणहि को राख नृपति बड़ भागे हैं।
जिनकी कही मानि वन गवने, राम हृदय अनुरागे हैं।
तिनके वाक तुमहु धरि शीशहिं, पालहु पुहुमि को पागे हैं।
पितु-निदेश-गुरु सचिव सभामत, श्रुति सम्मत रखि आगे हैं।
राज करहु करि प्रजा को रंजन, तनिक दोष नहिं लागे हैं।

सुनत सुख ह्वै हैं सिय रामहु, राग द्वोष नहिं दागे हैं।
गुरु के बैन सुनत सचिवादिक, सभा-जननि जग जागे हैं।
भये प्रसन्न कहहि सब भरतहि, गुरु गौरव रखु रागे हैं।
हर्षण कान मूँदि सो सुनतहिं, व्याकुल बिलपन लागे हैं।

(१३४०)

हाय विधाता सुनौं मैं काह जेहिते, हृदय अवाँ इव दाह रे।
रुदत भरत दाबे दोउ श्रवणन, विलपत भरि भरि आह रे।
एक तो राम सिया मोहि लागे, गये गहर वन माँह रे।
पितु बिनु भयो अनाथ अहह दुख, बन्धु बिछोह बेथाह रे।
तेहि पै रहत राम के मोहि कहँ, करन चहत नर-नाह रे।
सहज नित्य भू के पति रघुवर, मैं सेवक पद-लाह रे।
मातृ-भोग सम दोष घटै सत, भूप बनन जो चाह रे।
हर्षण बहुरि जो कहिहैं कोऊ, जियब न जग बिच दाह रे।

(१३४१)

पानि बद्ध विनवौं सिर नाई।
छमिहैं आरत के अपराधहिं, करत विनय जो जाइ नशाइ।
सभा सचिव-गुरुदेव-जननि जे, मोहिं पै अमित कृपा दरशाइ।
राज सौंपि अति अधम को चाहहि, सहज शान्ति सुख सरल स्वभाइ।
मोरे मोह विवस ह्वै भ्रम ते, कहहिं सबै जो जियहिं जनाइ।
हठवस पापिहिं राज जो दैहैं, तुरतहिं रसा रसातल जाइ।
अँवा अनल इव धधकत हियरा, शीतल पन को स्वप्न न आइ।

रघुवर चरण कमल को देखे, मोरे जिय की जरनि जुड़ाइ।
परम प्रतीति हिये महँ उपजति, शरण सुखद श्री रघुकुल राइ।
हर्ष प्रात जइहौं प्रभु पाहीं, दृढ़ निश्चय दिय सबहिं सुनाइ।

(१३४२)

सुनतहिं भरत मुखनि के वाक।
भरत जिये जनु अमृत लहिके, श्रम नहिं पर्‌यो मनाक।
सकल अवध वासी सुख साने, गुरु जन जननी भाक।
प्रेम मूर्ति भरतहि जिय जाने, जग सुख जाने खाक।
स्वारथ–परमारथ गुनि प्रभुपद, रमे ताहिको ताक।
सबहिंकहे एक साथहिं धनि धनि, अवशि चलहिं रस छाक।
हम सब चलहिं संग में तिहरे, तनिक न मन मति थाक।
सियवर दर्शन लाभ अलौकिक, हर्षण पइहैं पाक।

(१३४३)

भरिके राघव की अति प्रीति।
भरत चले चित्रकूट कहँ, छाँड़ि सबै विपरीति।
जानि राम को घर अरु पुरी, राखे शुचि रखवार।
अनुज मातु गुरु सचिव लिय, सेनप सेन उदार।
पुरवासी मन मुदित ह्वै, चले विप्र सँग साधु।
राम दरश की लालसा, उर बिच वसी अगाधु।
साजे साज अनेक विधि, कौन कहै तेहिं गाय।

राम मनावन को चलत, विरह न हृदय समाय।
भरत पयादे जात लखि, कृषित गात दुख दाह।
राम मातु रखि पालकी, समुझाई गहि बाँह।
चलिहै पायन सबहिं जन, तुमहिं देखि बिनु यान।
हर्षण हिय धरि जननि रुचि, रथ चढ़ि चले सुजान।

(१३४४)

तमसा तट भरतादिक आये।
कुश साथरि को पेखि मुरछि महि, विलपत व्याकुल काये।
राम राम सिय सिया उचारत, लगे विरह के घाये।
मुनिवर पहुँचि उठाय हिय लै, बहुत भाँति समुझाये।
राम वास विश्राम करत मग, जहँ तहँ नेह नहाये।
सह समाज सिंगरौरहिं पहुँचे, सुनि निषाद घबराये।
संशय करत भरत लै दलबल, अवध छोरि कित जाये।
हर्षण लगत राम को जीतन, कीन्हे सबहिं उपाये।

(१३४५)

अचरज भरत काह को किय रे।
सकल सुरासुर मिलिके संगर, जीतै नहिं सिय पिय रे।
जासु तेज दश दिशि उदभासित, मृत्यु मृत्यु जिय जिय रे।
कालहिं जीति सकै जो रघुवर, महावीर्य-बल-धिय रे।
तिनहिं जितन की आस किये ये, धर्म मेटि सब दिय रे।

इतना कहि आवेश में आयो, ज्ञातिहिं कह गुह भिय रे।
तरनि बांस बोरहु सुरसरि, उतरैं भरत न दिय रे।
करि संग्राम बरुक मरि जावैं, राम सेव हित हिय रे।
जीवत पाँव न पाछे जावै, हर्ष लरहु सब प्रिय रे।

(१३४६)

कहत सब आगे धरिहैं पाँव।
राम प्रताप पाइ बल तिहरो, भिरिहैं भरत ते घाव।
रुंड मुंड मय मेदनि करिहैं, बाजा बजैं जुझाव।
इतना कहत छींक भै बायें, वृद्ध एक समुझाव।
भरतहिं मिलौ हार नहिं होइहैं, सगुन सुखद दरशाव।
रामहिं जात मनावन ये सब, सत्य सत्य पतिआव।
सहसा करि पीछे पछतावै, ते बुध नाहिं कहाव।
केवट पति सुनि कहेउ जाउँ मैं, लेहुँ मर्म कस भाव।
रहहु सिमिटि सिगरे इत हर्षण, तब तस करिहौं आय।

(१३४७)

लै बहु भेंट निषाद सिधायो।
दूरिहिं ते मुनिवरहिं प्रणमि के, सादर सबहिं चढ़ायो।
नाम जाति कहि भरतहिं नमि के, मातन शीश झुकायो।
राम सखा सुनि बड़े वशिष्टहु, नीचहिं उठि लपटायो।
भरत भाव कहि जात न जेहिं विधि, उर लगि भान भुलायो।

जानि लखन सम मातु अशीषहिं, निरखि नयन जल छायो।
राम लखन सिय केरि कुशलता, दृगभरि सोउ सुनायो।
हर्षण चलेउ लिवाय विनय करि, निशि निज गाँव बसायो।

(१३४८)

जो सुख भयो निषादहिं पाये।
सो सुख भरत हिये कर अनुभव, जाय न शारद गाये।
कहेउ सखा सो भूमि दिखावहु, सोये प्रभु जेहिं ठाये।
अस कहि केवट संग चले सो, धरे अंस भुज भाये।
परम पुनीत शिंशुपा देखत, किय प्रणाम दुख छाये।
करि परदक्षिण साथरि देखी, धीरज सकल गमाये।
लखि पदचिन्ह नयन रज लावत, धरि सिर पुनि कछु खाये।
कनक बिन्दु दुइ चारिक लखिके, रखे शीश सिय भाये।
हर्षण बैठि विकल बहु विलपत, आँखिन आँसु बहाये।

(१३४९)

राम लखन सिय का वन योग।
जननि जनक के प्राण पियारे, सुर दुर्लभ बहु भोगत भोग।
सुख सुषमा सौंदर्य के सागर, अति सुकुमार मधुर बिनुशोग।
सो वन बसहिं हमारे कारण, हाय अधम कर नेह को ढोंग।
हर्षण मुख दिखरैबे लायक, कबहु न होइहैं हँसिहैं लोग।

(१३५०)

करि विश्राम प्रात: जाग।
नित्य कर्म करि सहित समाजा, भरत भरि अनुराग।
एकहिं खेव पार भे सुरसरि, गुह प्रबन्धहिं लाग।
केवट साथ सबहिं कह भेजे, भरत भावहिं पाग।
पाँयन गये राम वन इतते, समुझि वाहन त्याग।
चले पयादेहिं सेवक बहु कह, चढ़िय अश्व अदाग।
सुने एक नहिं नेही नागर, राम रती भल भाग।
हर्षण हिय को हिय ही जानत, जरत जहँ विरहाग।

(१३५१)

झलका झलकत दैया भैया भरत के पाँव।
अरुण कमल कोमल पद तरवा, सुठि सुकुमार नयन सुख सरवा।
सेवक के शुचि सैंया। भैया भरत.
बिन पदत्राण भूमि नहिं परशे, पले सदा प्रेमिन के कर से,
छूँ छे चल सो पैंया।
भरतहिं तदपि देह सुध नाहीं, चित चिन्तत रघुनन्दन काहीं,
मन बिन तन का कैया।
कहत राम सिय राम सुभागा, नवल नवल उमगत अनुरागा,
नयन नीर छबि छैया।
प्रभु वन गवन सुरति के आये, लरखरात पग परत न ठाये,
बैठ भूमि विलपैया।

आरत हरण शरण सुख दानी, रक्षक राम हृदय अनुमानी,
चलत चरण चित लैया।
पहुँचि समाज प्रयागहिं आई, पीछे भरतहुँ पहुँचे जाई,
सब सुर सरित नहैया।
भरत पयादे चलिके आजू, हर्षण आये कहत समाजू,
दुख भर लोग लोगइया।

(१३५२)

भाव भरे त्रिवेणिहिं न्हाये।
तीर्थराजि कहँ किये दण्डवत, सुमिरि राम जल नयनन छाये।
भरत कहे हे तरल तरंगे, गंगे विनवहुँ शीश झुकाये।
सुरतरु सम सुखप्रद तव रेणू, ब्रह्म द्रवे महिमा को गाये।
चार पदारथ चहौं न स्वप्नेहु, स्वारथ परमारथ बिसराये।
सिया राम पद प्रेम निरन्तर, बढ़त रहै अनुदिन अधिकाये।
में सेवक अरु सियवर स्वामी, अटल रहै सम्बन्ध सुहाये।
जग समेत सिय-पिय गुरु संतहु, समुझि कुटिल चहैं दूर भगाये।
हौं बनि तृण-ते नीच अमानी, दास धर्म हर्षण अपनाये।

(१३५३)

सुरसरि माझ भई प्रिय बानी, भरत कहहु कस ऐसे।
जेहिं के चरण जनक हैं मोरे, तासु अनुज तुम तैसे।
प्रेम मूर्ति धनि जगमें जाये, रामहिं प्राण ते प्यारे।

नित्य अहौ तुम अनुज प्रभूके, सो बड़ भ्रात तिहारे।
तुम समान तुमही इक त्रिभुवन, दास-स्वरूप समाने।
सो जानत श्री सियके स्वामी, जहँ तहँ बढ़इ बखाने।
सुनत भरत सकुचे पै हर्षे, राम कृपा बड़ पाये।
हर्षण भरद्वाज के आश्रम, गये सचिव अगुआये।

(१३५४)

गने लोग लै भरत चले, मुनि मिलने।
पहुँचि प्रणमि मुनिवरहिं अनुज सह, बैठि नम्र दुख दैन्य-दले।
देखि भाव ऋषि परशि प्रेम ते, कहे लही सुधि सबहिं खले।
विधि पर कहा बसाय कोउको, होन हार है लगै गले।
सोच करहु जनि हियमे हारहु, राम प्राण प्रिय बन्धु भले।
सुमिरि हृदय तोहि प्रेम में पागैं, जाना मर्म प्रमाण बले।
तुमहिं सराहत राति गई सब, सोये नहिं श्री राम लले।
चन्द्र कीर्ति अनुपम तुम अवनी, श्रवण सुखद दृग-प्रिया पले।
सकल दोष वर्जित हिय हर्षण, सुर मुनि अचरज मानि ढले।
प्रेम पाठ त्रिभुवनहिं पढ़ाये, नेह निबाहि के छोड़ छले।

(१३५५)

तुम समान तुम तात कहौं मैं पुनि पुनि।
उदासीन तापस वन वसिके, कहा असत की बात।
शुचि समूह साधन फल पायो, सुन्दर सुखद सोहात।

सो है राम लखन सिय दर्शन, सुर नर मुनि सुख दात।
तेहि फलकर फल है दर्श तिहरो, प्राग भाग खुलि भात।
आतिथ करौ जो स्वीकृत मेरो, अनुपम आनँद जात।
सुनि सकुचाइ सोच का कीजै, गुरु आज्ञा गरुआत।
भरत कहे सिर आयसु मुनिकी, निशि वसि गवनब प्रात।
स्वागत लहि विधि विस्मयदायक, भरत नहीं लपटात।
वारि बीच जिमि वारिज हर्षण, संपति में नहि रात।

(१३५६)

प्रात न्हाइ मुनि बन्दि औ कहिकै।
सुने भरत चितकूट वसत प्रभु, चले विरह सरि वेगहिं बहिकै।
श्याम वरण जमुना जल पेखत, भयो उदीपन नेहहिं गहिकै।
सह समाज करि जमुना पारी, बसे बहुरि वट छायहिं चहिकै।
नित्य कृत्य करि पुन: चले सब, चहत दरश द्रुत प्रभुके लहिकै।
अस मन होत पंख जो होते, मिलतो जाय वेगमें बहिकै।
भरत दरश मग-बासी पावत, लहे परम पद सबहीं सहिकै।
हर्षण राम बन्धु के देखतहिं, सोहे प्रेम सरोवर ढंहि कै।

(१३५७)

भरत शत्रुहन श्यामल गौर।
निरखि ग्राम तिय कहहिं परस्पर, सखि ये वइ की और।
राम लखन सम सुघर सलोने, सोइ वर सोइ वपु सौर।

रहनि गहनि सोइ चलनि चातुरी, सोइ ठवनि चित चोर।
शील संकोच स्वभावहु सोइ सत, कछुक भेद मुख ठौर।
मुख मलीन हिय हर्ष न हर्षण, संग तिया नहिं गौर।
सेन साथ चतुरंगिनी चलत है, तेहिते संशय थोर।
बहुरे नहिं वे यहि मारग ते, ये उत जात विभोर।

(१३५८)

सखी री जोरी युगल ठटी।
पहिले गये जो जावत अबहीं, इक सम रूप अटी।
कथा बताय कही अलि एकी, जस वन गवन घटी।
राम लखन सिय फेरन जावत, रिपुहन भरत लटी।
भाग खुली करि दरश सबहिं की, झाँकी दृग न हटी।
कहँ हम देश गाँव कुल हीनी, गृह जंजाल जटी।
नर तन सुलभ मनहु नभ गंगा, बन्धन बृहद कटी।
इनहिं देखि मग विषधर जीवहु, विष तजि नेह डटी।
हर्षण प्रेम मूर्ति के पेखत, सब चल प्रेम पटी।

(१३५९)

संग निषाद श्री भरत सिधारे।
देखत वन गिरि आश्रम पावन, जेहि मग प्रभू पधारे।
राम वास थल लखतहिं प्रणमैं, केवट सबहिं दिखावै।
भरि उसास हे सिय हे रघुवर, कहि दृग नीर बहावैं।

उमगत प्रेम तबहिं चहुँ ओरी, जड़ चेतन करि भोरा।
द्रवहिं उपल अरु कुलिस कठिन जो, मोम बनै गिरि ठौरा।
पुर जन परिजन वन जन नेहहिं, शारद शेष न गाई।
लखि हर्षण सुर सुमनहिं वर्षत, जय कहि हिय हर्षाई।

(१३६०)

तेहि वासर वसि बहुरि प्रभात, क्रिया करि गवने।
पंचभूत सेवहिं अनुकूले, दुख न होइ जेहि भरतहिं जात।
प्रभु-गुण कहत सुनत सँग केवट, वारि विलोचन पुलकत गात।
जो कोउ मिलत ताहि ते पूँछहिं, राम लखन सिय की कुशलात।
कहै कुशल तेहि दौरि मिलैं द्रुत, सुखसनि हिय ते हिय लपटात।
कछुक दूर चलि सखा बतायो, देखहिं कामद गिरि दरशात।
किये प्रणाम भरत लखि शैलहिं, भुँइ परि सहित समाज सुहात।
हर्षण हृदय भरे अनुरागहि, चितवत ताहि चले मग जात।

(१३६१)

प्रभु मोर अघहिं बसे बन आई।
मोहिं समान को जग बिच पापी, मुख दिखराइ न जाइ।
कुटिल केकई मत में मानी, तजहिं तो कहा बसाइ।
प्रणत पाल करुणाकर कोमल, शरण सुखद रघुराइ।
दीन बन्धु लखि विरद की ओरी, क्षमहिं तो दोष नशाइ।
यहि प्रकार मन का का सोचत, नयन नीर मुख छाइ।

पहुँचि गये मन्दाकिनि तीरे, बसे रात हरि ध्याइ।
हर्षण नदी नहाय सबेरे, लिय निषाद अगुआइ।
रिपुहन सहित चले प्रभु भेंटन, सब कहँ तहँ टिकाइ।

(१३६२)

जागी वहाँ सिया सह साँई।
देखी स्वप्न सास सब अशुभा, मलिन वसन अकुलाई।
तापहिं तपे भरत इत आये, संग समाज लेवाई।
सिय मुख स्वप्न सुने रघुनन्दन, विस्मय उर न समाई।
लखनहिं कहे सपन नहिं नीको, कोउ कुचाह सुनाई।
तेहिं बिच वन मृग सकुन समूहहु, आश्रम शरणहिं आई।
इतने महँ कोउ भील कह्यो प्रभु, आये तव दोउ भाई।
संग सेन चतुरंग अपारी, महि रज गगनहिं छाई।
हर्षण सुनत सियावर सोचत, कारण कौन अवाई।

(१३६३)

लछिमन साकरे के साथी।
लखत खभार हृदय में हरि के, आतुर भर दृग पाथी।
उठि करि जोरि झुकाये शीशहि, बोले हे रघुराया।
सकल मदहिं ते नृप मद भारी, नहुष वेणु नशि आया।
जेहि वस भरतहु नशि मर्यादा, चले जितन बिभु काहीं।
मारि अकंटक राज को चाहत, सेन साजि इत आहीं।

इतने कहत वीर रस जागेउ, कसि कटि भाथ उचारे।
रहत लखन को प्रभु को चितवै, धनुष बाण कर धारे।
जो सहाय सत शंकर आवैं, मारि सदल दोउ भ्राता।
हर्ष राम सेवक यश लेवौं, करौ शपथ तव त्राता।

(१३६४)

सुनें शपथ तीनों लोक जनी।
सबहिं सभय आतुर अकुलाने, डोल धरा चल वायु घनी।
सिन्धु उर्मि अति उछरन लागी, मनहु प्रलय को काल गनी।
बन पर्वत लगि अग्नि बढ़त सी, धूमिल नभ उत्पात ठनी।
देखि दशा सुर कँपत जोरि कर, नभ ते लछिमन सुयश भनी।
सहसा नहिं विद्धीत क्रिया जे, ते सुख भाजन ज्ञान धनी।
साधु शिरोमणि प्रेम के विग्रह, भरत भाव नहिं कहत फनी।
विरह विकल सियरामहिं फेरन, हर्षण आवत दीन बनी।

(१३६५)

सुनि सुर गिरा लखन सकुचान।
निज समीप बैठाइ परशि कर, बोले राम सत्य सुख खान।
उचित नीति तुम कहे बन्धु प्रिय, नृप मद कठिन नरक की खान।
जेहिं बस बने मत्त बड़ नरपति, अनुचित उचित न कीन्हे ध्यान।
पै सत कहौं भरत सम भरतहिं, भयो न है नहिं होबन आन।
सदगुण सदन कुलहिं के दीपक, भक्ति ज्ञान वैराग प्रधान।

ताहि राज मद होइ न सपनेहु, विधि हरि हर पद पाइ प्रमान।
क्षीर सिन्धु किमि काँजी सीकर, विनशै भला लेहु जिय जान।
हर्षण त्रिकरण नेह हमहिं पै, मोहिं बिन तिनहिं न भावै आन।

(१३६६)

इत श्री भरत कुआँरे, बाँहू निज केवट के धारे।
चले मिलन प्रभु आश्रम अतुरे, नवनि नेह वपु वारे।
विरह वेग मग डगमग डोलत, दृग ते बहत पनारे।
निरखि राम-पद अंक अवनि पै, करि प्रणाम हिय हारे।
रज सिर धरि दोउ आँखिन आँजी, बन्धु मिलन सुख पा रे।
प्रेम विवस पथ भूलत सुर लखि, कहि मग सुमनहिं झारे।
केवट चढ़ि ऊँचे कह भरतहिं, लखु कुटीर प्रभु प्यारे।
पाकर जम्बु रसाल तमालहिं, बीच बड़ो वट भा रे।
सुंदर पर्ण कुटी तहँ छाई, हर्ष बसें त्रय तारे।

(१३६७)

उर उमगत पावन थल लखि लाल।
भरत प्रेमवस होहिं विभोरा, तैसहिं रिपुहन नृपति किशोरा,
कबहुँ ठुठक कहुँ द्रुत की चलि चाल।
जब समुझत रघुवीर स्वभावा, तब पथ परत उताइल पावा,
केकइ करतब सुधि ते गति टाल।
सोचत हृदय कबहुँ भ्रम भावन, रामलखन सिय सुनि मम आवन,
उठि न जाँय ठावहिं तजि सुख शाल।